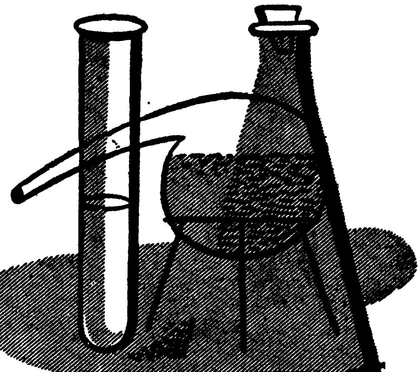
ज्ञान-विज्ञान ७

रसायन शास्त्र की कहानी

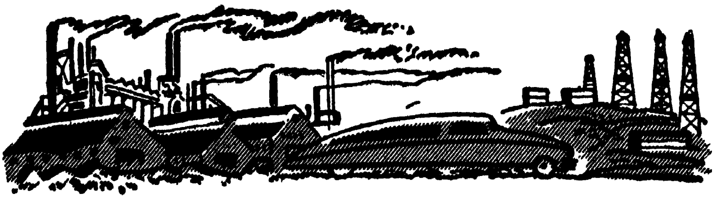


राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

'All About the Wonders of Chemistry'
का हिन्दी अनुवाद

अनुवादक : रमेशचन्द्र वर्मा

मूल्य : दो रुपए (२·००)
प्रथम संस्करण : सितम्बर, १९५८
प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली
मुद्रक : इण्डिया प्रिंटर्स, दिल्ली



क्रम

१

रसायन शास्त्र का जन्म कैसे हुआ



लकड़ी से बनी कुर्सी पर बैठकर कांच की खिड़की से छनकर आती रोशनी में कागज़ से तैयार की गई यह किताब आप पढ़ने जा रहे हैं। अक्सर आप अधिकांशतः इस्पात से बनी और गैसोलीन से चलने वाली मोटर पर चढ़कर कंकरीट की सड़कों पर घूमने भी जाते होंगे। आपके लिए तरह-तरह की खाने की चीजें कांच, धातु, कागज़ या प्लास्टिक के बर्तनों में रखकर आती हैं। कहने का मतलब यह कि सैकड़ों तरह के पदार्थ आपकी रोजाना की जिन्दगी में काम आते हैं।

कोई भी चीज़ लीजिये; आप देखेंगे वह किसी न किसी पदार्थ से बनाई जाती है। जैसे, पानी पीने का गिलास कांच, चीनी मिट्टी, अल्यूमिनियम अथवा प्लास्टिक में से किसी भी पदार्थ से बनाया जा सकता है। साथ ही उतना ही सत्य यह भी है कि किसी भी पदार्थ से अनेक प्रकार की वस्तुएं बनाई जा सकती हैं। जैसे, कांच का उपयोग हम गिलास, खिड़की का शीशा, कैमरे का लेंस या बिजली का बल्ब बनाने में कर सकते हैं।

लकड़ी के किसी टुकड़े को तराश कर गुड़िया अथवा नाव का

आकार दिया जा सकता है, फिर भी वह रहेगा तो लकड़ी का टुकड़ा ही, है न ? एक चम्मच चीनी एक गिलास पानी में घोलने पर गायब हो जाती है ; लेकिन आप जानते हैं कि चीनी कहीं गई नहीं है बल्कि उसी पानी में मिल गई है और पानी शरबत बन गया है । आप यह भी जानते हैं कि शरबत को गरम करने पर पानी भाप के रूप में ऊपर उड़ जायेगा और चीनी के रवे फिर मिल जायेंगे ।

वस्तुओं के आकार-प्रकार हम आसानी से बदल सकते हैं लेकिन जिन पदार्थों से वे बनती हैं उन पदार्थों को ही बदल डालना रसायन शास्त्र के बिना संभव नहीं हो सकता । ऐसे परिवर्तन को, जिसमें वस्तु का आकार-प्रकार ही नहीं बल्कि पदार्थ ही बदल जाता है, **रासायनिक परिवर्तन** कहा जाता है ।

रासायनिक परिवर्तन हमारे चारों ओर हमेशा होते रहते हैं । लोहे पर जंग लगती है, दूध खट्टा पड़ जाता है, सूखी पत्तियां सड़ती हैं । हम खाना बनाते हैं, कपड़े धोते हैं, मोटर चलाते हैं, फोटो उता-



पानी द्रव, ठोस और गैस तीनों रूपों में हो सकता है ।

रते हैं, आग जलाते हैं—हर काम रसायन शास्त्र की मदद से। हमारे ज़िन्दा रहने का ही मतलब यह है कि कोई बड़े जटिल रासायनिक परिवर्तन सदा हमारे भीतर होते रहते हैं।

अक्सर एक ही पदार्थ कई आकार-प्रकारों में प्रकट हो सकता है, फिर भी उसमें रासायनिक परिवर्तन नहीं होता। नल से निकलने वाला पानी और बाजार में बिकने वाला बर्फ बिलकुल भिन्न मालूम पड़ते हैं, लेकिन हैं दोनों पानी ही—पानी जमकर बर्फ बन जाता है। चाय की केतली से निकलने वाली भाप वास्तव में गैस के रूप में पानी ही है। मतलब यह कि सिर्फ तापक्रम बदल कर हम पानी को तीन अलग-अलग आकारों—**ठोस, द्रव और गैस**—में प्राप्त कर सकते हैं।

अन्य पदार्थ भी इन्हीं तीन आकारों में मिल सकते हैं। सामान्यत: लोहा ठोस है लेकिन कारखानों में गलाकर द्रव बना दिया जाता है और सूर्य में यह गैस के रूप में मौजूद रहता है। लेकिन वह किसी भी आकार में क्यों न हो, रहेगा तो आख़िर लोहा ही।

लेकिन एक दूसरे प्रकार के परिवर्तन भी हमारे चारों ओर हमेशा होते रहते हैं। लकड़ी जल जाती है तो कोयले के कुछ काले-काले टुकड़े बाकी बचते हैं। एक चम्मच में चीनी रखकर तेज लपट पर गर्म की जाये तो भूरा-सा पदार्थ चम्मच पर बच जाता है। कितनी ही कोशिश क्यों न की जाये कोयला फिर लकड़ी नहीं बन सकता और भूरा पदार्थ फिर चीनी नहीं बन सकता। ऐसा करने की कोशिश टूटे हुए अंडे को फिर जोड़ने की कोशिश के समान ही निराशाजनक हो सकती है! और ऐसा होने का कारण केवल यह है कि वस्तु का आकार भर ही नहीं बदला उसका पदार्थ भी बदल गया है।

रासायनिक परिवर्तनों का अध्ययन करने वाला वैज्ञानिक ही

रसायनज्ञ है। उसकी कोशिश हमेशा यह रहती है कि वह सुपरिचित पदार्थों को अन्य नये, हमारे लिए अधिक उपयोगी पदार्थों में बदल सके।

सौ वर्ष पहले ज़िन्दगी का नक्शा बिलकुल दूसरा था और अनेक परिवर्तन रसायनशास्त्र के कारण ही संभव हो सके हैं। रसायनज्ञों की ही कोशिशों के फलस्वरूप हमारे मकान अधिक आरामदेह, हमारे वस्त्र अधिक अच्छे और हमारा भोजन अधिक पौष्टिक हो सका है। आधुनिक रसायन शास्त्र के बिना रेलगाड़ियां, मोटरें, विमान आदि यातायात के साधन हमारे पास न होते। सिनेमा, रेडियो, टेलीविज़न कभी भी न जनमते। सबसे बुरा तो यह होता कि अनेकानेक भयानक बीमारियों से रक्षा करने वाली उत्तमोत्तम आधुनिक औषधियां हमें उपलब्ध न होतीं। रसायन शास्त्र के आश्चर्यजनक कारनामों के बिना हम हजारों वर्षों पहले के अपने गुफावासी पूर्वजों से तनिक भी अच्छे नहीं हो सकते थे।

असल में पहला रसायनज्ञ तो वही अनजान गुफावासी था जिसने सबसे पहले आग जलाने का आविष्कार किया था। शुरू-शुरू में आग का इस्तेमाल वह सिर्फ खाना पकाने में करता था। बाद में उसे पता लगा कि कुछ विशेष प्रकार की चट्टानें जब गर्म हो उठती थीं तो चमकदार धातुएं रहस्यमय ढंग से दिखलाई पड़ने लगती थीं। ये धातुएँ उन चट्टानों में पहले से ही छिपी रही होंगी। लेकिन बहुत समय बीत जाने पर ही मानव समझ सका कि रासायनिक परिवर्तनों में असल में क्या होता है। पुराने जमाने में तो इन परिवर्तनों को जादू मानकर उनके बारे में जिज्ञासा ही नहीं की जाती थी।

बाद में ज्यों-ज्यों सभ्यताएं उन्नति करती गईं, लोगों में अपने



गुफावासी आदमी सबसे पहला रसायनज्ञ था, जिसने आग का पता लगाया।

आसपास की चीज़ों के प्रति सतर्कता जागती गई। उन्हें मालूम पड़ा कि कुछ पदार्थ दूसरे पदार्थों से ज्यादा साधारण और ज्यादा महत्त्वपूर्ण होते हैं। आग ही नहीं वर्षा या समुद्र का पानी भी महत्त्वपूर्ण वस्तुएँ हैं। हर वस्तु का आधार विस्तृत पृथ्वी है और चारों ओर होती है हवा जो देखी तो कभी नहीं जा सकती लेकिन महसूस हमेशा की जा सकती है।

समय बीतता गया। प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने पृथ्वी, वायु, आग और पानी के विचार को उठाया और यह बताने की

कोशिश की कि ब्रह्माण्ड की सारी चीजें इन चारों **तत्वों** के मिश्रण से बनती हैं। लेकिन अरस्तू और उनके शिष्य अपने विचारों की सत्यता सिद्ध करने के लिए प्रयोग करने में विश्वास नहीं करते थे। फलस्वरूप अपने विचारों को व्यक्त करने से ज्यादा आगे वे बढ़ न सके।

इसी बीच दूसरे देशों के लोगों में भी अपने वातावरण की जानकारी के लिए रुचि जागी। ऐसे एक समुदाय का नाम था **कीमियागर**। कीमियागरों की कोशिश यह थी कि किसी प्रकार



कीमियागरों ने लोहे और सीसे को सोने में बदलने की कोशिश की।

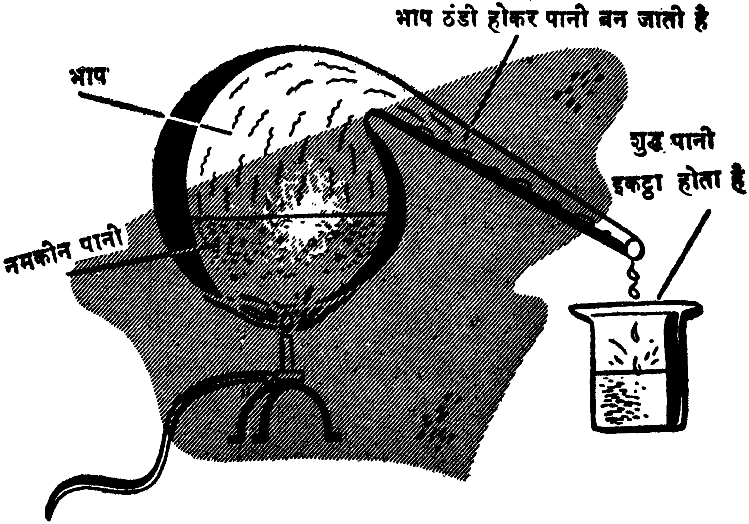
वे लोहा, सीसा जैसी साधारण धातुओं को सीधे सोना बना सकें। वे अपने प्रयोग बड़े गोपनीय ढंग से करते थे और तरह-तरह के अजीबोग़रीब मिश्रण उबाला करते थे। उन्हें आशा थी कि कभी न कभी वह महान् उपाय वे अवश्य खोज निकालेंगे जो उन्हें धनवान और शक्तिशाली बना देगा।

सैकड़ों वर्षों तक ये प्रयोग किये जाते रहे। कीमियागरों का विश्वास था कि एक ऐसा आश्चर्यजनक **पारस पत्थर** अवश्य है जिसके स्पर्श मात्र से चीज़ें सोना बन जायेंगी। लेकिन अपनी हरसंभव कोशिश के बावजूद ऐसा कोई पत्थर खोज पाने में वे असमर्थ रहे और एक भी तोला सोना न बनाया जा सका। कभी-कभी ऐसा भी होता था कि किसी बादशाह या दरबारी को खुश करने के लिए कीमियागर उबलते हुए मिश्रण में सोने का टुकड़ा बड़ी सफाई से डाल दिया करते थे, लेकिन ऐसा करना खतरे से खाली नहीं था—चालाकी पकड़ी जाने पर मौत की सज़ा भी दी जा सकती थी।

जिस समय कोलम्बस ने अपनी पहली अमरीका यात्रा आरम्भ की, लगभग उसी समय कीमियागरों को अपनी सोना बना पाने की योग्यता पर सन्देह होने लगा और उन्होंने दवाइयां बनाने की ओर अपना ध्यान मोड़ दिया। लेकिन उनकी पारस पत्थर की खोज अब भी जारी रही, क्योंकि अब उनके विचार से वह अनन्त स्वास्थ्य की कुञ्जी था। और अजीबोग़रीब मिश्रण गर्म करते हुए अपना काम वे करते ही गये। उनकी एक बड़ी प्रिय दवा थी—सोना, शेर का दिल चूरा किया हुआ, जादूगरनी की खाल, केंचुए और प्याज़ का मिश्रण। कभी-कभी उनकी दवाइयां कारगर हो जाती थीं, लेकिन ज्यादातर तो वे दवाएं न रहकर ज़हर हो जाया करती थीं और मरीज मर ही जाया करते थे।

आज हम कीमियागरों और दवाइयां बनाने वालों के मूर्खतापूर्ण विचारों पर हंस सकते हैं लेकिन आधुनिक रसायनज्ञ निस्सन्देह उनके बड़े ऋणी हैं। कम से कम अपने वातावरण को जानने की उत्सुकता तो उनमें थी और उनकी देखादेखी दूसरे लोग भी इसमें रुचि रखने लगे थे। इसके अलावा कुछ नई धातुओं का पता भी उन्होंने लगाया था और मिश्रित द्रवों को अलग अथवा साफ करने का ऐसा तरीका ईजाद किया था जो आज आधुनिक रासायनिक कारखानों में भी काम आता है।

द्रव असल में कई चीज़ों का मिश्रण होता है। इसके विभिन्न अवयवों को अलग करने के लिए रसायनज्ञ द्रव को गर्म करते हैं और प्रत्येक अवयव अलग तापक्रम पर उबलने लगता है। हर बार भाप को दूसरे बर्तन में ले जाकर ठंडा किया जाता है जिससे वह



पुनः द्रव में बदल जाती है। इस क्रिया को **स्रावण** कहा जाता है। इसी किताब में आगे आप पढ़ेंगे कि किस तरह पेट्रोलियम (पृथ्वी से निकाला हुआ कच्चा मिट्टी का तेल) को स्रावित करके गैसोलीन, मशीनों को चिकना करने वाला तेल तथा दूसरी कई वस्तुओं में बदल दिया जाता है।

आश्चर्य तो यह है कि जिन रहस्यों का पता कीमियागर सैकड़ों वर्ष कोशिश करने पर भी नहीं लगा पाये उनका पता पिछले कुछ वर्षों में लग गया है। निश्चय ही आधुनिक वैज्ञानिकों को ये परिणाम रहस्यमय पारस पत्थर की खोज करके या प्रयोग करते समय जादुई मंत्रों का उच्चारण करके नहीं मिले हैं। उन्होंने उसी विधि को अपनाया था जिसे सभी आधुनिक वैज्ञानिक अपनाते हैं—और वह विधि है बड़ी सावधानी से प्रयोग करना और अपना ज्ञान एक-एक ज़र्रा करके बढ़ाना। तभी वे काफी हद तक प्रकृति के क्रिया-कलापों को समझ सकने में समर्थ हुए हैं।

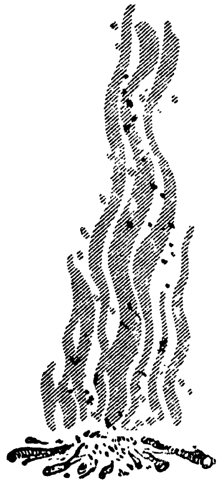
विज्ञान आज सचमुच दूसरी वस्तुओं को सोने में बदल सकता है लेकिन विधि इतनी जटिल है कि सस्ती नहीं पड़ती। जमीन के भीतर से सोना निकाल लेना कहीं ज्यादा आसान और सस्ता है।

इसीलिए सोना बनाने के फेर में न पड़कर रसायनज्ञों ने अपना ध्यान कीमियागरों के दूसरे स्वप्न—दीर्घ जीवन के रहस्यों की खोज—पर लगा दिया है। निश्चय ही वे आदमी को अमर बना देने वाली कोई औषधि नहीं खोज पाये हैं, लेकिन ऐसी अनेक बीमारियों की, जो पहले हजारों व्यक्तियों को या तो मार डालती थीं या अपंग बना देती थीं, बढ़िया से बढ़िया औषधियां हमारे पास हैं। इसी किताब में आपको अनेक स्वास्थ्यप्रद रासायनिक पदार्थों के बारे में पता चलेगा; साथ ही ऐसी चीजों के बारे में भी आप

पढ़ेंगे जिनकी वजह से हमारा जीवन ज्यादा आरामदेह, मनोरंजक और सुरक्षित बनता है। ऐसे खजानों के सामने भला सोने का क्या मूल्य !

२

हमारी दुनियां किन पदार्थों से बनी है



आधुनिक रसायनशास्त्र का जन्म लगभग उसी समय हुआ जब अमेरिका को आज़ादी मिली । उस समय के वैज्ञानिकों की उसी पुराने सवाल में दिलचस्पी थी : "चीजें जलती हैं तो क्या होता है ?"

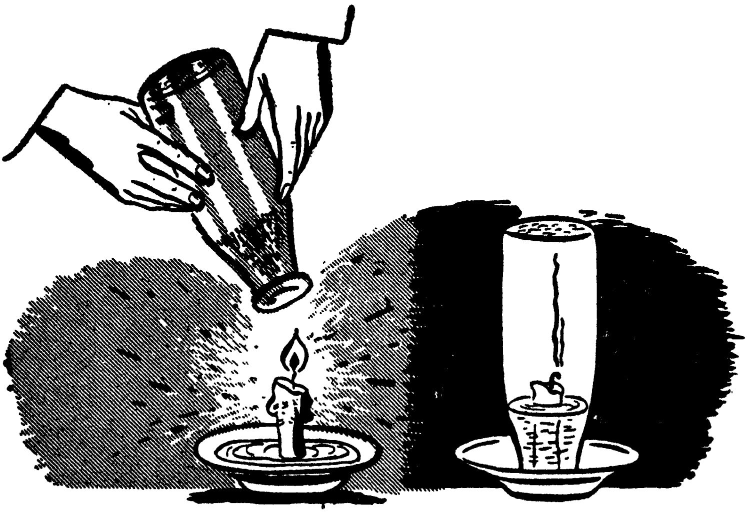
उस समय तक सबसे अच्छा विचार यही समझा जाता था कि हर जलने वाली चीज़ में **फ्लोजिस्टन** नामक पदार्थ होता है जो चीज़ के जलते समय उससे बाहर निकल जाता है । यह विचार बिलकुल ठीक मालूम पड़ता था, क्योंकि लोग देखते थे कि लकड़ी या कोयला जलाने पर थोड़ी-सी राख बच रहती है और बाकी पदार्थ गायब हो जाता है । अब आपकी समझ में आ गया होगा कि जलने की क्रिया को समझाने के लिए उन्होंने इस रहस्यमय, अदृश्य फ्लोजिस्टन की कल्पना क्यों की ।

फिर भी कुछ लोगों का विश्वास फ्लोजिस्टन सिद्धान्त पर जमता न था । उनमें से एक थे अंगरेज़ पादरी और शौकिया रसायनज्ञ जोज़ेफ़ प्रीस्ले । उन्होंने पता लगाया कि एक खनिज विशेष

को गर्म करने पर एक गैस निकलती है। इस गैस को, जो अब ऑक्सीजन के नाम से पुकारी जाती है, एक बोतल में भरने के बाद उन्होंने मालूम किया कि चीज़ें खुली हवा की अपेक्षा इस गैस में ज्यादा तेजी से जलती हैं। फ्रांस के एक मेधावी वैज्ञानिक अन्तोइन लेवाइशिये ने प्रीस्ले के प्रयोगों को दोहराया और फिर उससे भी आगे प्रयोग किये। उन्होंने इस नई गैस से भरी बोतल में एक टीन का टुकड़ा गर्म किया। धातु की चमकदार सतह धुंधली पड़ गई और तौलने पर उसका वजन पहले से ज्यादा मालूम पड़ा।

चक्कर में पड़ कर लेवाइशिये सोचने लगे कि फ्लोजिस्टन निकल जाने पर तो टीन का वजन पहले से **कम** हो जाना चाहिए। लेकिन चूंकि वह भारी हो गया था इससे यही साबित हुआ कि उसने अपने चारों ओर की गैस से कुछ **ग्रहण ही किया** था। वैज्ञानिकों ने जल्दी ही महसूस कर लिया कि फ्लोजिस्टन सिद्धांत से काम नहीं चल सकता। हम अब जाकर कहीं वास्तविक कारण जान पाये हैं। **जब कोई चीज़ जलती है तो पदार्थ रासायनिक ढंग से ऑक्सीजन के साथ मिल जाता है।**

इतना ज्ञान हमें हमेशा रहा है कि जलने के लिए चीज़ों को किसी न किसी तरह हवा की जरूरत पड़ती ही है। ऑक्सीजन का आविष्कार होने पर हमें इसका कारण भी मालूम हो गया। आप खुद इसकी परीक्षा कर सकते हैं। पानी से भरी तश्तरी में एक जलती हुई मोमबत्ती खड़ी कर दें और उसे एक दूध की बोतल से ढक दें। आप देखेंगे कि थोड़ी ही देर में मोमबत्ती बुझ जाती है। पुराने जमाने में रसायनज्ञ इसका कारण यों बताते कि बोतल के भीतर की हवा में फ्लोजिस्टन इतनी ज़्यादा मात्रा में मोमबत्ती से निकलकर भर गया कि मोमबत्ती बुझ गई।

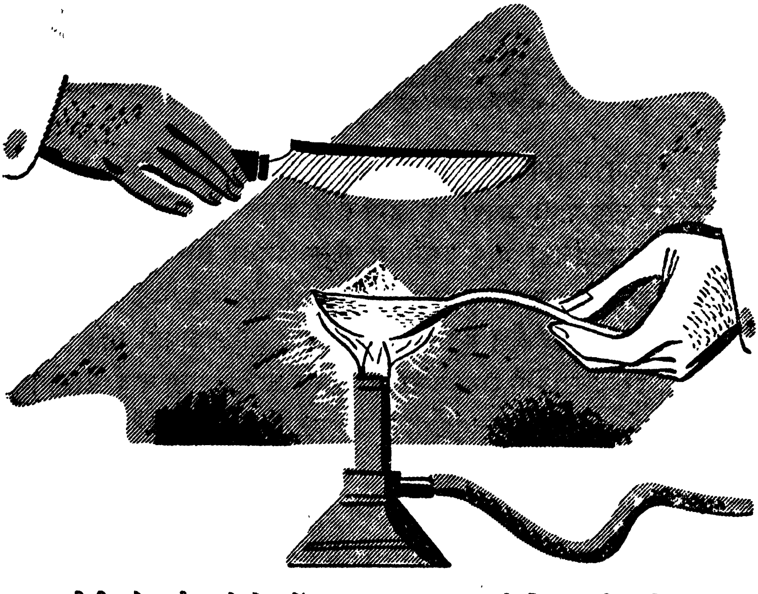


लेकिन प्रयोग समाप्त हो जाने पर आप देखेंगे कि बोतल में कुछ दूर तक पानी ऊपर चढ़ गया है। बोतल के भीतर की हवा का लगभग पांचवां भाग जलने में काम आया था, अतः यही भाग ऑक्सीजन था। बाकी बची लगभग सारी गैस दूसरी है जिसे नाइ-ट्रोजन कहा जाता है। यह जलने में जरा भी सहायता नहीं करती लेकिन इसके उपयोग अन्य अनेक हैं जिनके बारे में आप बाद में पढ़ेंगे।

सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात तो यह है कि साँस लेने वाले सभी जानदार प्राणी—आदमी भी—ऑक्सीजन का उपयोग करते हैं। सांस लेना एक प्रकार से धीमे-धीमे जलने की क्रिया ही है। जो खाना आप खाते हैं वह है ईंधन, जिससे पैदा होने वाली गर्मी आपके शरीर का तापक्रम ठीक बनाये रखती है।

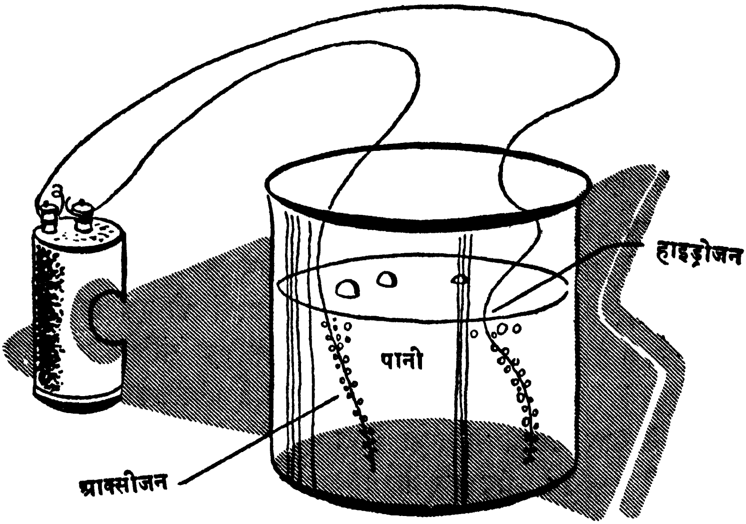
आपको याद होगा कि अब से दो हजार साल पहले यूनानियों

ने यह बताने की कोशिश की थी कि विश्व की सारी चीज़ें पृथ्वी, हवा, आग और पानी नामक चार तत्वों के मिलने से बनी हैं। जब वैज्ञानिकों ने प्रयोगों के जरिये अपनी जानकारी बढ़ाना शुरू किया तो उन्हें लगा कि यह विचार बड़ा अच्छा है, लेकिन रोज-रोज आविष्कृत होने वाली नई-नई चीज़ों की बनावट समझाने के लिए चार से ज़्यादा तत्वों की जरूरत पड़ेगी। पदार्थों के भीतर क्या है, यह जानने के लिए वैज्ञानिकों ने उन्हें तोड़ने के कई तरीके ढूँढ़ निकाले। एक तरीका है गर्म करना। दूसरा तरीका है बिजली की धारा प्रवाहित करना



चीनी को गर्म करने से हमें यह पता चल जाता है कि वह किन-किन तत्वों से बनी है।

मान लो हमें पता लगाना है कि चीनी किन तत्वों के मिलने से बनी है। एक चम्मच में चीनी लेकर जब हम उसे लपट में गर्म करते हैं तो चटचटाहट की आवाज़ होती है। उसी समय अगर चाकू का फल हम चीनी के ऊपर पकड़े रहें तो उस पर एक तरह की धुंध-सी जम जाती है। चटचटाने की आवाज़ और चाकू के फल पर जमी भाप से हमें पता लगता है कि पानी चीनी से ही आया है। गर्म करने पर चीनी पिघल जाती है, उसका रंग गहरा होने लगता है और आखिरकार वह कोयले की तरह काली हो जाती है। असल में वह कोयला ही बन जाती है। कोयला और चीनी से बना काला पदार्थ दोनों ही **कार्बन** हैं, जिन्हें और तत्वों में नहीं बांटा जा सकता।



बिजली द्वारा पानी के विभिन्न तत्वों को अलग किया जा सकता है।

लेकिन चीनी से निकले पानी को आगे भी तोड़ा जा सकता है। पानी में थोड़ा-सा अम्ल डाल दिया जाता है और किसी बैटरी से बिजली की धारा उसमें बहाई जाती है तो ऑक्सीजन के बुलबुले एक तार पर निकलने लगते हैं और हाइड्रोजन के बुलबुले दूसरे तार पर। ये तथा लगभग नब्बे और पदार्थ रासायनिक **तत्व** कहलाते हैं। सभी दूसरी चीजें तत्वों के रासायनिक संयोग से बनती हैं। इन संयोगों को रासायनिक **यौगिक** कहा जाता है।

आज जितने तत्व हम जानते हैं उनका पता लगाने में सारे संसार के वैज्ञानिकों को अनेक वर्ष लग गये थे। चांदी, सोना, टीन और कार्बन यद्यपि पुराने जमाने से मालूम थे लेकिन रासायनिक तत्वों की हैसियत से उनका महत्व नहीं पता था। पिछले कुछ सालों में कुछ और तत्व भी खोज निकाले गये हैं और कोई आश्चर्य नहीं अगर भविष्य में और तत्व भी खोजे जा सकें।

इस तरह कुल मिलाकर लगभग सौ तत्व हैं जिनमें से अधिकतर बहुत कम मिलते हैं और साधारणतः हमारे चारों ओर बिखरी सामान्य वस्तुओं में नहीं पाये जाते। लगता है कि जब ब्रह्माण्ड बना होगा तब प्रकृति ने उनका बहुत ही थोड़ा हिस्सा जोड़ दिया होगा। यों, पृथ्वी, समुद्र और हवा के साधारण पदार्थ केवल तीस के लगभग तत्वों के मिलने से बने हैं। नीचे इन तत्वों की एक तालिका दी जाती है। रसायनज्ञ हर तत्व को उसके एक संक्षिप्त नाम से पुकारते हैं जिसे तत्व का **संकेत** कहा जाता है। तालिका में प्रत्येक तत्व के साथ उसका संकेत भी दिया गया है। इन तत्वों में से कुछ ठोस हैं, कुछ द्रव, और कुछ गैस।

अधिक मात्रा में प्राप्त होने वाले कुछ रासायनिक तत्व

नाम	*संकेत*	*विवरण*
अल्यूमिनियम	Al	हल्की चांदी-सी सफेद धातु
बेरियम	Ba	नरम चमकदार धातु
ब्रोमीन	Br	भारी भूरे रंग का द्रव
कैल्शियम	Ca	हल्की चमकदार धातु
कार्बन	C	काला ठोस या साफ रवे (हीरा)
क्लोरीन	Cl	सुआपंखी गैस
कोबाल्ट	Co	चटखने वाली भूरे रंग की धातु
तांबा	Cu	नरम लाल रंग की धातु
फ्लोरीन	F	हल्की पीली गैस
सोना	Au	भारी, नरम, पीले रंग की धातु
हाइड्रोजन	H	हल्की अदृश्य गैस
आयोडीन	I	गहरे बैंजनी रंग के रवे
लोहा	Fe	भूरी धातु
सीसा	Pb	भारी, नरम, नीली-भूरी धातु
लिथियम	Li	हल्की, नरम, सफेद धातु
मैग्नीशियम	Mg	हल्की, सफेद धातु
मैंगानीज़	Mn	चटखने वाली सफेद धातु
पारा	Hg	भारी, चांदी-सी द्रव धातु
निकिल	Ni	कड़ी सफेद धातु
नाइट्रोजन	N	अदृश्य गैस
ऑक्सीजन	O	अदृश्य गैस
फास्फोरस	P	मोम सरीखा सफेद ठोस
पोटैशियम	K	हल्की, नरम, चांदी-सी धातु

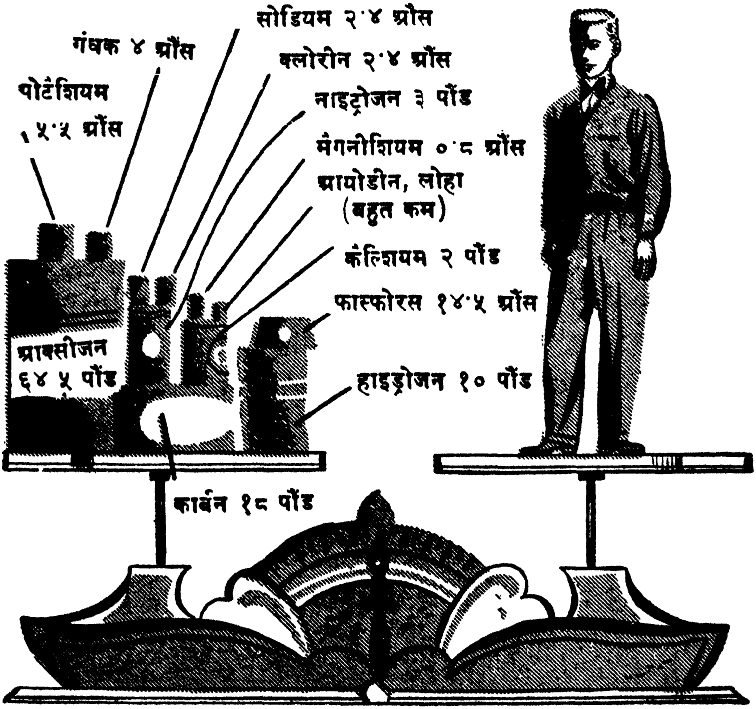
नाम	*संकेत*	*विवरण*
सिलिकन	Si	चटखने वाले भूरे रंग के रवे
चांदी	Ag	भारी, चमकदार सफेद धातु
सोडियम	Na	हल्की, नरम, चांदी-सी धातु
गन्धक	S	हल्के, पीले, चटखने वाले रवे
टीन	Sn	चांदी-सी सफेद धातु
टिटैनियम	Ti	चमकदार सफेद धातु
जस्ता	Zn	चटखने वाली नीली-सफेद धातु

ज्यादा संभावना इसी बात की है कि इनमें से भी अधिकांश तत्वों को आपने नहीं देखा होगा। कारण सिर्फ यही है कि वे यौगिकों में बन्द रहते हैं और परिणामस्वरूप अपना व्यक्तित्व खो देते हैं। एक उदाहरण लीजिये—सोडियम एक चमकदार धातु है और क्लोरीन एक तीखी बू वाली गैस, फिर भी उनके एक यौगिक को आप हमेशा अपने खाने के साथ खाते हैं। रसायनज्ञ इस यौगिक को **सोडियम क्लोराइड** कहते हैं और आम जनता कहती है **नमक**। आप कभी भी नहीं सोच सकते थे कि नमक के सफेद कणों में एक धातु और एक हरी गैस रहस्यमय रूप से मिश्रित हैं।

चीनी तीन तत्वों—कार्बन, ऑक्सीजन और हाइड्रोजन—का यौगिक है। खाने वाले सोडे में भी यही तीन तत्व होते हैं लेकिन उसमें सोडियम भी होता है; और इसी कारण वह चीनी से भिन्न पदार्थ बन जाता। आपके अपने शरीर में ही १३ प्रसिद्ध तत्व अनेक प्रकार के संयोगों में मौजूद रहते हैं।

कुछ तत्व कई अलग-अलग भौतिक रूपों में पाये जाते हैं। उदाहरण के लिए, कार्बन के तीन रूप होते हैं। एक तो वह चटख जाने वाला काला पदार्थ होता है जो चीनी को गर्म करने या टोस्ट

जल जाने पर बचता है। कोयला अधिकतर कार्बन के इसी रूप में पाया जाता है। कार्बन का दूसरा रूप **ग्रेफाइट** कहलाता है। यह भी काला ही होता है लेकिन चिकना और मोम जैसा मुलायम भी होता है। मिट्टी के साथ मिलाकर लम्बी-लम्बी सलाइयों के रूप में यही पेंसिल में 'सीसे' की तरह इस्तेमाल किया जाता है। (असली सीसा, Pb, पेंसिलों में इस्तेमाल नहीं किया जाता)। कार्बन का तीसरा रूप अपने दूसरे काले-कलूटे भाइयों से कहीं ज्यादा सुन्दर



बहुत थोड़े मूल्य के रासायनिक तत्वों से आपका निर्माण हुआ है।

दिखलाई पड़ता है। यह खूबसूरत, चमकदार रवों के रूप में होता है जिन्हें हम **हीरा** कहते हैं। तीनों कार्बन-रूप रासायनिक ढंग से एक समान होते हैं। कोई मूर्ख धनवान अगर अपनी अंगीठी में कोयलों की जगह हीरे जलाये तो भी जलायेगा वह कार्बन ही। हीरों की कीमत बहुत ज्यादा इसलिए होती है कि वे बहुत कम मिलते हैं।

रसायनज्ञ आज ५ लाख से अधिक रासायनिक यौगिकों के बारे में जानते हैं, जो वास्तव में सौ से भी कम तत्वों से बनते हैं। यह संभव इसीलिए होता है कि हम कम संख्या में होने वाली चीजों को भी अनेकानेक भिन्न **संसर्गों** में प्रबन्धित कर सकते हैं। ठीक उसी तरह जैसे अंगरेजी भाषा के २६ अक्षरों से हजारों शब्द बनाये जा सकते हैं।

उदाहरण के लिए सिर्फ चार अक्षर—a, b, d और e लीजिये। सिर्फ इन्हीं चार अक्षरों से हम नीचे लिखे शब्द बना सकते हैं :

a	bad	be	bed
abed	bade	bead	dab

और अगर एक अक्षर को एक से अधिक बार प्रयोग करने की आज़ादी हम बरतें तो निम्नांकित शब्द और बन सकते हैं :

add	bee	ebb	deed

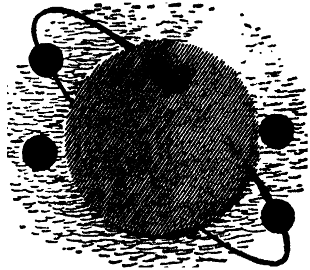
अब आप खुद समझ सकते हैं कि छब्बीस अक्षरों को मनचाही बार इस्तेमाल करके अंगरेजी भाषा के बहुसंख्यक शब्द प्राप्त किये जा सकते हैं।

लेकिन अंगरेजी भाषा में अक्षरों के वे **सभी** संसर्ग प्रयुक्त नहीं होते जो प्राप्त किये जा सकते हैं। a, b, d और e अक्षरों से adeb, beda और deab जैसे संसर्ग भी बनाये जा सकते हैं लेकिन ये असली शब्द नहीं हैं। ठीक यही बात रासायनिक संयोगों के लिए

भी सही है। सोचना चाहिए तो ClO या HCN_2 आदि लाखों समूहों के बारे में आप सोच सकते हैं लेकिन इस तरह के यौगिक कभी भी नहीं बनते। हां, इतना सच है कि जो भी तत्व चाहिए आप आपस में **मिश्रित** कर सकते हैं, लेकिन सिर्फ कुछ ही बार आपस में सचमुच गुंथकर वे रासायनिक यौगिकों का निर्माण करेंगे। और यह होता कैसे है, इसका विवरण अगले अध्याय में दिया गया है।

३

रसायनज्ञ अणु बनाते हैं



आजकल 'परमाणु' (एटम) शब्द हमें अक्सर सुनने को मिलता रहता है। 'परमाणु ऊर्जा', 'परमाणु बम' और 'परमाणु शक्ति' के बारे में हम रोज पढ़ते हैं और शायद हमें यही मालूम होता है कि परमाणु कोई नई चीज़ हैं। लेकिन असलियत बिलकुल दूसरी है। आज से दो हजार साल पहले भी लोग परमाणुओं के बारे में सोचा करते थे, लेकिन रसायन शास्त्र में उनका महत्व लगभग १५० वर्ष पहले तक कुछ ज्यादा नहीं था। यह समय नेपोलियन महान् का था। ज्यादातर लोग नहीं जानते कि यही वह समय भी था जब इंगलैंड के एक साधारण शिक्षक जॉन डाल्टन ने परमाणु के सिद्धान्त का प्रवेश रसायन शास्त्र में किया और सचमुच डाल्टन का सिद्धान्त विश्व के लिए नेपोलियन के किसी भी युद्ध से ज्यादा महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

पुराने ज़माने में लोग एक मनोरंजक समस्या को सुलझाने की कोशिश किया करते थे: मान लीजिये आप किसी पदार्थ का एक टुकड़ा लेकर उसे तोड़कर दो हिस्सों में कर दें, तब उनमें से एक हिस्से को लेकर दो हिस्सों में तोड़ दें और यही क्रम जारी रखें। क्या इस तरह टुकड़े करते जाने की कोई सीमा है? कुछ लोगों का ख्याल था कि यह विभाजन हमेशा-हमेशा जारी रखा जा सकता है और इसकी कोई सीमा नहीं है। दूसरों का विचार था कि यह काम उसी समय तक जारी रखा जा सकता है जब तक एक **परमाणु**

(एटम) तक न पहुंचा जाय, उसके बाद नहीं; क्योंकि परमाणु पदार्थ का वह सबसे छोटा कण है जो प्रकृति में उपस्थित रह सकता है। उनका ख्याल था कि संसार के सभी पदार्थ अत्यन्त छोटे-छोटे कणों के मिलने से बनते हैं, इतने छोटे कण कि देखे नहीं जा सकते।

उन दिनों परमाणु का विचार एक 'अटकल' भर था। काफ़ी दिनों बाद ही वैज्ञानिक साबित कर सकने में समर्थ हुए कि परमाणु वास्तव में मौजूद रहते हैं और उनकी उपस्थिति को मानकर अनेक क्रियाओं का कारण बताया जा सकता है। नई बात यह मालूम हुई कि परमाणु पुराने लोगों की कल्पना से भी कहीं अधिक छोटे हैं। इतने छोटे कि सबसे ज्यादा शक्तिशाली सूक्ष्मदर्शकों द्वारा भी नहीं देखे जा सकते। अगर पानी की एक बूंद का आकार पृथ्वी के बराबर बड़ा कर दिया जाय तो उसके भीतर उपस्थित परमाणुओं का आकार सिर्फ बास्केट बॉल के खेल में काम आने वाली गेंद के बराबर होगा। इस वाक्य के अन्त तक काम में लाई गई स्याही में असंख्य परमाणु मौजूद हैं।

चूंकि किसी ने एक अकेले परमाणु को अपनी आंखों से देखा नहीं है, तो फिर हम कैसे जानते हैं कि परमाणु नाम की कोई चीज़ होती ही है? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि वैज्ञानिकों को ऐसे तथ्यों का पता लगा है जो **परमाणुओं की उपस्थिति मानकर ही** समझाये जा सकते हैं। यह व्याख्या



यह काटना कहां तक जारी रखा जा सकता है!

परमाणुओं को देख पाने के बराबर ही विश्वासोत्पादक है। इस प्रकार की व्याख्या पर आपको संदेह भी नहीं करना चाहिए, क्योंकि अनेक सुपरिचित कामों में हम इसका इस्तेमाल करते हैं। एक उदाहरण लीजिये। मान लीजिये, आपके सामने ही किसी शिकारी ने बंदूक कंधे से टिकाकर एक गिलहरी पर निशाना साधा। तब आपको 'धांय' की एक ज़ोरदार आवाज़ सुनाई पड़ती है और आप देखते हैं कि गिलहरी मरकर सड़क पर गिर पड़ी है। स्वभावतः आप **यही मान लेते हैं** कि गिलहरी बन्दूक से निकली गोली से ही मरी हालांकि आपने गोली को हवा में उड़कर गिलहरी से लगते हुए नहीं देखा। कोई और व्याख्या आप सुनेंगे ही नहीं।

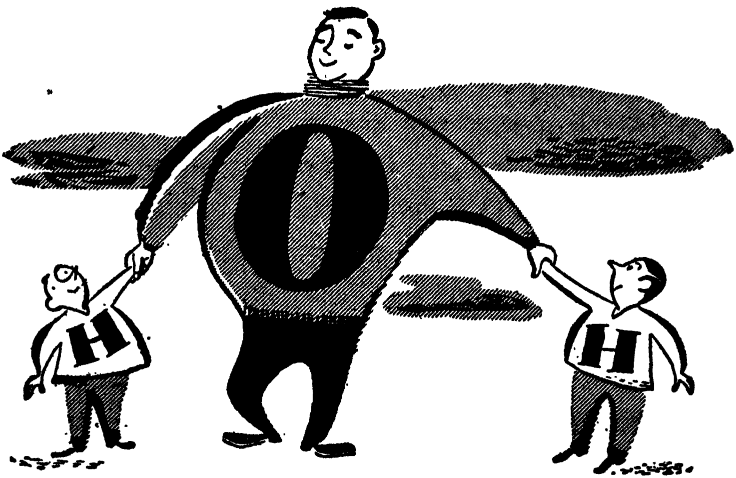
बिलकुल यही बात हमारे परमाणु सम्बंधी ज्ञान के लिए भी सच है। यह एक ऐसा सिद्धान्त है जो कारगर होता है। वैज्ञानिकों के लिए परमाणु उतने ही वास्तविक होते हैं जितने आपके लिए गेंद आदि खेल के सामान। और फिर यही नहीं है कि वह परमाणुओं में विश्वास करता है बल्कि वह उन्हें गिन चुका है, तौल चुका है और पता लगा चुका है कि वे कितने बड़े हैं—उस पर मज़ा यह कि किसी परमाणु की शक्ल तक नहीं देखी कभी।

आइये, अब हम पता लगायें कि परमाणुओं का रसायन शास्त्र के साथ क्या सम्बन्ध है। रसायनज्ञ जॉन डाल्टन ने यह पता लगाने का निश्चय किया कि किसी यौगिक का निर्माण करने के लिए तत्वों की **कितनी मात्रा की** जरूरत होती है। अनेक संसर्गों के साथ प्रयोग करने के बाद उन्होंने पाया कि किन्हीं दो तत्वों की किन्हीं भी मात्राओं को वह **मिला** तो सकते हैं, लेकिन उन दोनों का कोई असली यौगिक बनाने के लिए उनका प्रयोग एक निश्चित अनुपात में किया जाना चाहिए। लगता है कि रासायनिक रूप में जोड़े जा सकने वाले पदार्थों

के अनुपात के प्रति प्रकृति बड़ी सतर्क है।

डाल्टन ने इसका कारण यह बताया कि तत्वों का निर्माण परमाणुओं से होता है। वे सोचने लगे: "मान लो कि एक तत्व के सभी परमाणु समान होते हैं और किसी दूसरे तत्व के परमाणुओं से भिन्न। यह भी मान लो कि जब दो तत्व आपस में मिलकर किसी यौगिक का निर्माण करते हैं तो एक तत्व की निश्चित परमाणु-संख्या दूसरे तत्व की निश्चित परमाणु-संख्या के साथ मिलती है। बस, यही बात है। यही कारण है कि दोनों तत्वों की आवश्यक मात्रा कभी नहीं बदलती।"

एक उदाहरण लीजिये। हाइड्रोजन और ऑक्सीजन नामक दो गैसों का यौगिक ही पानी है। जब रसायनज्ञ इन दो तत्वों को मिलाकर पानी बनाना चाहते हैं तो उन्हें दोनों गैसों को हमेशा



तीन परमाणु मिलकर पानी के—H_2O नामक अणु का निर्माण करते हैं।

एक निश्चित अनुपात में मिलाना पड़ता है। यह अनुपात कभी बदलता नहीं, चाहे एक बूंद पानी बनाना हो या गैलनों। पानी बनाने के लिए आवश्यक ऑक्सीजन और हाइड्रोजन की मात्राओं को मापने पर उन्हें पता चलता है कि ऑक्सीजन का प्रत्येक परमाणु हाइड्रोजन के **दो** परमाणुओं को पकड़ कर बैठता है। पानी के लिए प्रयोग किये जाने वाले परिचित चिह्न 'H_2O' का यही मतलब है।

अब सारी चीजें अपने आप साफ होने लगती हैं। परमाणुओं का एक निश्चित ढंग से मिलाना **अणु** कहलाता है। और प्रत्येक यौगिक एक ही प्रकार के अणुओं का समूह होता है। प्रत्येक अणु में उसके अवयव-तत्वों के निश्चित परमाणु मौजूद रह सकते हैं, ज्यादा नहीं। ठीक उसी तरह जिस तरह फुटबाल की टीम के सारे खिलाड़ी अपने-अपने निश्चित स्थान पर होते हैं और दूसरे ढंग से उन्हें खड़ा करके टीम को मजबूत नहीं बनाया जा सकता।

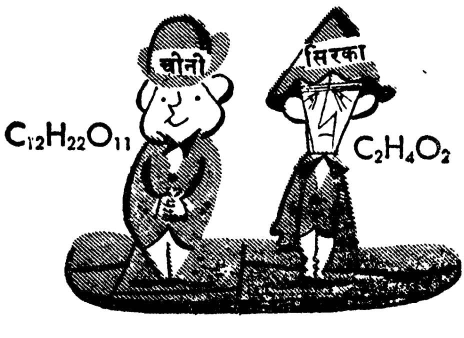
खाने वाले नमक के एक अणु का रासायनिक चिह्न अथवा **सूत्र** NaCl है, जिसका अर्थ यह है कि नमक का प्रत्येक अणु सोडियम (Na) के एक परमाणु और क्लोरीन (Cl) के एक परमाणु के मिलने से बना है। नमक का रासायनिक नाम **सोडियम क्लोराइड** और उसका सूत्र बनाने के लिए आपको सिर्फ चार अक्षर 'एन-ए-सी-एल' कहने की जरूरत है। लोहे पर लगने वाली जंग **फेरिक आक्साइड है** और उसका सूत्र Fe_2O_3 है। यानी इस यौगिक का प्रत्येक अणु लोहे (Fe) के दो और ऑक्सीजन (O) के ३ परमाणुओं के मिलने से बना है। इसका नाम पुकारने के लिए आपको सिर्फ 'एफ-ई-टू-ओ-थ्री' कहना होगा।

यही पद्धति हजारों लाखों यौगिकों के लिए सही है। इसी किताब में बाद में आप ऐसे जटिल यौगिकों के बारे में भी पढ़ेंगे

जिनमें आधे दर्जन प्रकार के परमाणु सम्मिलित होते हैं। रसायनज्ञ वास्तव में अणुओं का निर्माण करने वाला कारीगर है और परमाणुओं को वह 'ईंटों' की तरह इस्तेमाल करता है।

नीचे कुछ सुपरिचित यौगिकों की तालिका उनके रासायनिक नामों और सूत्रों सहित दी गई है :

साधारण नाम	*रासायनिक नाम*	*सूत्र*
खाने वाला सोडा	सोडियम बाई कार्बोनेट	$NaHCO_3$
गन्ने की चीनी	सक्रोज	$C_{22}H_{22}O_{11}$
साफ करने वाला द्रव	कार्बन टेट्राक्लोराइड	CCl_4
ग्रेन अलकोहल	इथेनॉल	C_2H_6O
घरेलू अमोनियम	अमोनियम हाइड्राक्साइड	NHO_5
धोबी का मांड़	मांड़	$C_6H_{10}O_5$
चूना	कैल्शियम कार्बोनेट	$CaCO_3$
कीड़ों से बचाने वाला पदार्थ	नैफ्थलीन	$C_{10}H_8$
सिरका	एसिटिक एसिड	$C_2H_4O_2$
धोने वाला सोडा	सोडियम कार्बोनेट	Na_2CO_3



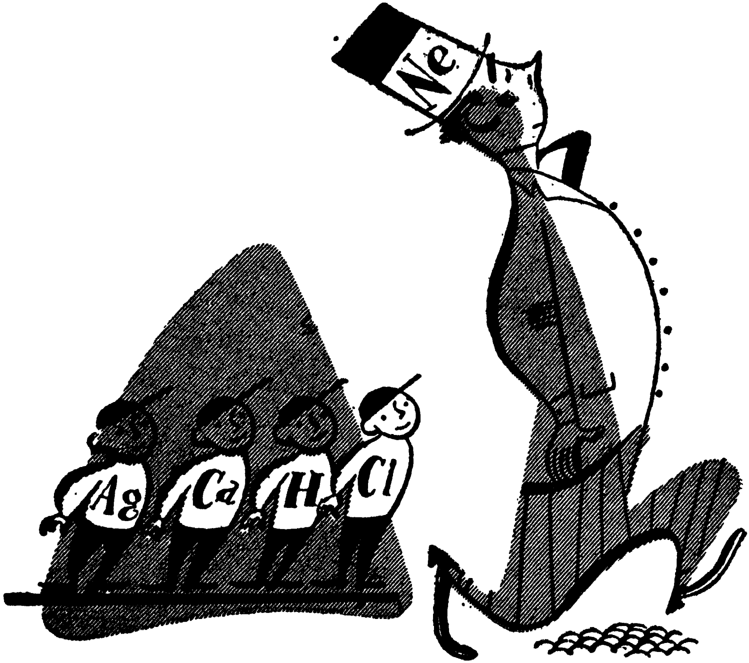
उपरोक्त तालिका में आप देख रहे हैं कि चीनी, अलकोहल, मांड़ और सिरका जैसी विभिन्न वस्तुएं समान तत्त्वों से बनी हैं। ये यौगिक एक दूसरे से भिन्न इसलिए हैं कि उनके अणुओं में उपस्थित परमाणुओं की संख्या **भिन्न** है।

अधिकतर सुपरिचित वस्तुएं इन्हीं यौगिकों की मिश्रण हैं। दूध, लकड़ी, सन्तरे का रस, कागज, गैसोलीन और इस्पात सब इसी प्रकार के मिश्रण हैं। समुद्र का पानी असल में पानी में घुले कई यौगिकों का मिश्रण है। मिट्टी अनेक यौगिकों का मिश्रण है और हवा लगभग पूरी की पूरी केवल **तत्त्वों** का मिश्रण है जिनमें ऑक्सीजन और नाइट्रोजन प्रमुख हैं। पीतल भी तत्वों का ही मिश्रण है जिनमें तांबा और जस्ता मुख्य हैं।

आपको याद होगा कि पिछले अध्याय के आखीर में अणु की तुलना हमने शब्दों से की थी और परमाणुओं की तुलना उन शब्दों को बनाने वाले अक्षरों से। आपने देखा था कि अक्षरों के अनेक संसर्ग ऐसे भी थे जिनसे शब्द नहीं बनते थे। ठीक उसी तरह रसायनज्ञ ऐसे अनेक परमाणु-समूहों की कल्पना कर सकता है जो बनते ही नहीं, क्योंकि परमाणु कुछ विशेष दशा में ही अपने साथी चुनते हैं। ऐसा लगता है, मानो प्रत्येक प्रकार के परमाणु के निश्चित संख्या में 'हाथ' होते हैं जिनसे वे दूसरे परमाणुओं को पकड़ सकते हैं। इन 'हाथों' की संख्या को परमाणु की **संयुजता** कहा जाता है।

हाइड्रोजन परमाणु की संयुजता १ होती है; यानी उसके सिर्फ एक हाथ होता है। ऑक्सीजन परमाणु की संयुजता २ होती है, जिनसे वह दो हाइड्रोजन परमाणुओं को पकड़ कर बांधे रह सकता है; इस तरह बन जाता है पानी का एक अणु, H_2O। सोडियम और क्लोरीन दोनों ही एक हाथ वाले परमाणु हैं। इसीलिए वे सोडियम

क्लोराइड, NaCl, बना सकते हैं, जिसमें सोडियम और क्लोरीन प्रत्येक का एक-एक परमाणु होता है। आप स्वयं देख सकते हैं कि $NaCl_2$ नामक कोई यौगिक नहीं बन सकता क्योंकि क्लोरीन का एक परमाणु कुछ पकड़ ही नहीं सकता। लेकिन $CaCl_2$ नामक यौगिक होता है क्योंकि कैल्शियम के दो हाथ होते हैं और वह दो क्लोरीन परमाणुओं को पकड़े रह सकता है।



नियोन का एक परमाणु विभिन्न परमाणुओं से अलग ही रहना चाहता है।

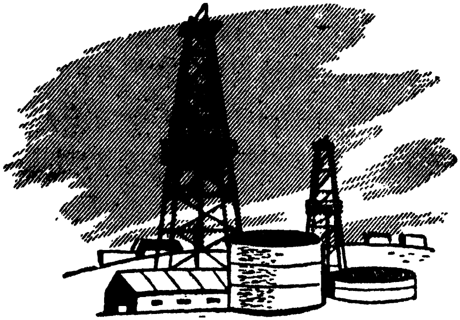
सोना और चांदी दोनों की संयुजता १ होती है, कैल्शियम की २ और अल्यूमिनियम की ३। हीलियम और नियोन जैसे कुछ तत्व

ऐसे भी होते हैं जो किसी भी तत्व से सम्मिलित नहीं होते क्योंकि उनकी संयुजता ० होती है। फिर भी अधिकांश परमाणुओं की संयुजता १ और ७ के बीच में होती है। कुछ तत्वों, विशेषकर कार्बन, की कई संयुजताएं होती हैं और इसी कारण उनके अनेकानेक यौगिक बनते हैं।

निस्सन्देह रसायनज्ञ यह विश्वास नहीं करते कि परमाणु वास्तव में छोटे-छोटे बौने हैं जो आपस में मिल जाते हैं। आजकल उन्हें मालूम है कि सभी परमाणुओं में छोटे-छोटे विद्युत्-कण होते हैं जो **इलेक्ट्रोन** कहलाते हैं और वे समझ सकते हैं कि संयुजता वास्तव में परमाणुओं के भीतर रहने वाले इलेक्ट्रोनों के आकर्षण के फल-स्वरूप उत्पन्न संयोग-शक्ति है।

४

रसायनज्ञ का ख़ज़ाना—मिट्टी का तेल



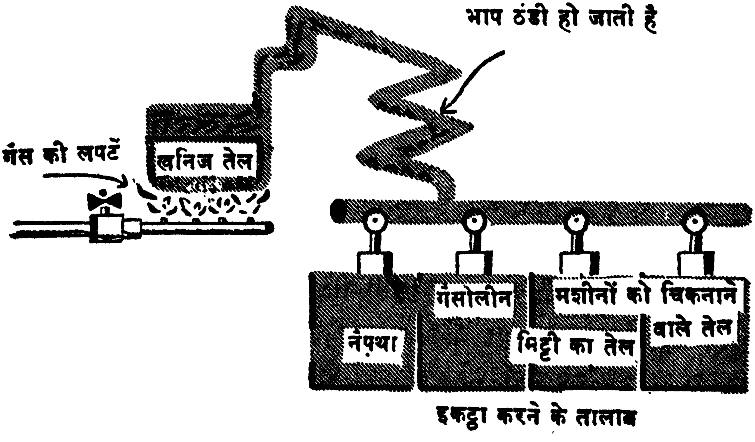
पानी को छोड़कर पेट्रोलियम शायद पृथ्वी पर सबसे ज़्यादा पाया जाने वाला उपयोगी और मूल्यवान द्रव है। पेट्रोलियम (खनिज तेल) संसार के अनेक भागों में धरती के नीचे गहराई में पाया जाता है। इसी से हमें गैसोलीन, जलाने वाला मिट्टी का तेल, मशीनें चिकनी करने वाले सभी तरह के तेल, मोम, ग्रीज़ और अन्य कई उपयोगी पदार्थ मिलते हैं। हमारी आधुनिक मोटरें, रेलगाडियां, विमान तथा दूसरी मशीनें इसके पदार्थों के बिना चल ही नहीं सकतीं।

पेट्रोलियम का पता हज़ारों बरसों से था, लेकिन जमीन में कुआं खोदकर अधिक मात्रा में उसे निकाल सकने का तरीक़ा अमेरिकी गृह-युद्ध के समय में ही मालूम हो सका था। उस समय तक घरों, दूकानों और कारखानों में ह्वेल मछली का तेल जलाया जाता था।

थोड़े ही दिनों में कई स्थानों पर कुएं खोदे जाने लगे और जल्द ही पेन्सिलवानिया, ओक्लाहोमा, टेकसाज़, और कैलीफोर्निया में तेल के कुओं पर खड़ी इस्पात की ऊंची मीनारें दिखलाई पड़ने लगीं। जहां-जहां तेल पाया गया वहां-वहां नये शहर बस गये। बाद में रूस, अरब, दक्षिणी अमेरिका और पूर्वी द्वीप समूह में भी तेल के बड़े-बड़े क्षेत्र पाये गये। आज संसार भर में लगभग दो अरब पीपे पेट्रोलिय

हरसाल निकाला जाता है। यह पेट्रोलियम इतना होता है कि १ वर्ग मील क्षेत्रफल की और ३०० फुट गहरी झील बन जाये। केवल संयुक्त राज्य अमेरिका में कुल उत्पादन का दो-तिहाई भाग निकाला जाता है।

कच्चे तेल का पता लगाना और उसे जमीन से बाहर निकालना तो पहला कदम है। काले-कलूटे बदबू देने वाले इस द्रव मिश्रण से उपयोगी पदार्थ निकाले जा सकने से पहले आवश्यक है कि इसे साफ़ किया जाय। कच्चा तेल सामान्यतः स्रावण-विधि, जो पृष्ठ बारह पर समझाई गई है, द्वारा साफ़ किया जाता है। पेट्रोलियम एक बड़े कुंड में धीरे-धीरे गर्म किया जाता है। सबसे पहले मिश्रण के हलके द्रव उबलते हैं और उनकी वाष्प दूसरे कुंड में ले जाई जाती है, जहां वह इतनी ठंडी की जाती है कि द्रव बन जाय। यह है रसायन नैफ्था, जो वार्निश बनाने में काम आता है।



पेट्रोलियम (कच्चा तेल) स्रावण क्रिया द्वारा शुद्ध किया जाता है।

तब बचा हुआ कच्चा तेल और गर्म किया जाता है, जिस पर गैसोलीन नामक मिश्रण बाहर निकलता है। धीरे-धीरे गर्मी बढ़ाते जाने पर जलाने का तेल, मशीनों को चिकना करने वाले तेल, ग्रीज़, वैसलीन, मोम और अलकतरा एक के बाद दूसरे निकलते आते हैं। आवश्यकता होने पर इन पदार्थों को पुनः स्रावित करके और साफ़ कर लिया जाता है। तब इनसे फर्श बनाने वाले पदार्थ, लाइनोलियम, कीड़े मारने वाली दवाएँ, रंग, कोल्ड क्रीम, मोमबत्तियां, कृत्रिम रबड़ और दर्जनों अन्य वस्तुएं बनाई जाती हैं।

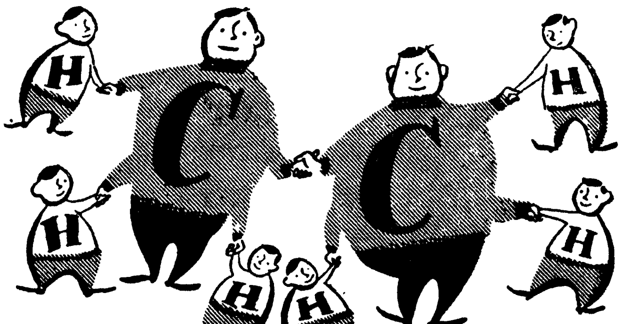
पेट्रोलियम किस तरह का रसायन है और यह कहां से आया ? वैज्ञानिकों का विश्वास है कि अरबों वर्ष पहले छोटे-छोटे समुद्री पौधे और जानवर मरकर उसकी तलहटी में इकट्ठे हो गये और बाद में बालू से ढक गये। बालू आख़िरकार चट्टान में बदल गई और इन नन्हे-नन्हे जानवरों के सड़े-गले अवशेष एक काले, तेलहे द्रव में बदल गये। बहुत बाद में चट्टानें सूखी धरती बन गईं और आदमी ने उसमें से तेल खोज निकाला।

रसायनज्ञ को मालूम है कि पेट्रोलियम वास्तव में यौगिकों का मिश्रण है जिन्हें **हाइड्रोकार्बन** कहा जाता है। इस तरह के यौगिकों का प्रत्येक अणु वास्तव में कार्बन परमाणुओं की एक शृंखला है जिसमें हाइड्रोजन परमाणु गुंथे रहते हैं। कार्बन बड़ा आश्चर्यनक तत्व है क्योंकि उसके परमाणुओं में रासायनिक सम्मिलन की अद्भुत क्षमता होती है। लगता है उन्हें मिलना बड़ा अच्छा लगता है क्योंकि वे आपस में भी मिल लेते हैं। साधारणतः कार्बन की संयुजता ४ होती है। याद रखिये, इसका मतलब यों समझा जा सकता है कि प्रत्येक कार्बन परमाणु में चार 'हाथ' होते हैं जिनसे वह दूसरे परमाणुओं को पकड़ सकता है (पृष्ठ ३१)। उदाहरणतः एक कार्बन

परमाणु चार हाइड्रोजन परमाणुओं को पकड़कर एक मीथेन अणु बना सकता है। मीथेन पेट्रोलियम में मौजूद सबसे आसान यौगिक है। मीथेन अणु को यों चित्रित किया जा सकता है :

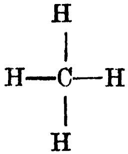


इसी समूह में दूसरा यौगिक होता है ईथेन जिसमें दो कार्बन परमाणु और छै हाइड्रोजन परमाणु होते हैं। इसका स्वरूप यों है :

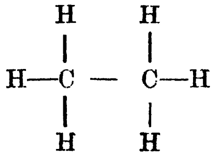


अब से हम अणुओं के चित्र उसी ढंग से खींचेंगे जिस ढंग से रसायनज्ञ खींचते हैं। यानी परमाणुओं के लिए रासायनिक संकेतों का प्रयोग करेंगे और आपस में गुंथे दो हाथों के लिए एक छोटी रेखा

का। रसायनज्ञ ऐसी रेखा को **संयुजता कड़ी** कहते हैं। अणु का चित्रनुमा सूत्र, जिससे हमें मालूम होता है कि उसके परमाणु आपस में किस प्रकार जुड़े हैं, **आकार सूत्र** कहलाता है। यानी रसायनज्ञों के अनुसार मीथेन और ईथेन के स्वरूप नीचे दिखाये गये ढंग से होंगे :

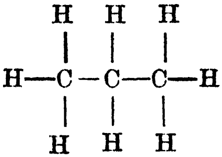


मीथेन

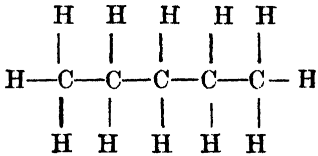


ईथेन

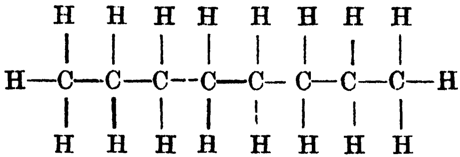
नीचे पेट्रोलियम में पाये जाने वाले कुछ और यौगिक हैं :



प्रोपेन



पेन्टेन



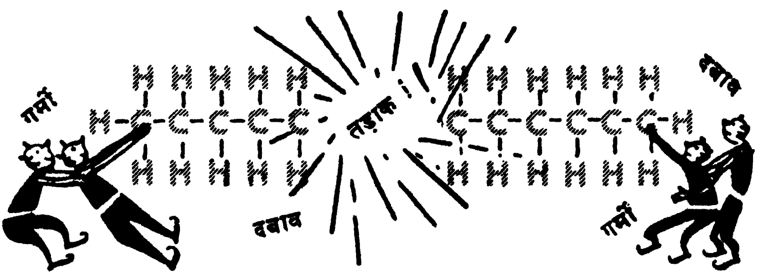
ऑक्टेन

उपरोक्त चित्रों से आप देख रहे होंगे कि सभी यौगिक एक ही आकार में—शृंखलाबद्ध—बनते हैं। पेट्रोलियम में मौजूद सबसे लम्बे और सबसे भारी हाइड्रोकार्बन के अणु में ६० कार्बन परमाणु शृंखलाबद्ध होते हैं। इसका सूत्र $C_{60}H_{122}$ है।

जब कच्चा तेल स्रावित किया जाता है तो ६ से लेकर १२ कार्बन

परमाणु वाले हल्के अणु एक साथ इकट्ठे होते हैं। बाद में और स्रावण तथा रासायनिक विधियों से सफ़ाई करने पर यही मिश्रण गैसोलीन बन जाता है। मोटर के इञ्जन के कारबुरेटर में गैसोलीन को गैस बनाकर हवा के साथ मिश्रित कर दिया जाता है। तब 'स्पार्क प्लगों' की मदद से यह मिश्रण इञ्जन के सिलंडरों में विस्फोटित होता है, और इसी से मोटर को चलाने की ताकत पैदा होती है।

आजकल इतनी ज्यादा संख्या में मोटरें, ट्रकें और विमान आदि इस्तेमाल किए जाते हैं कि उनके लिए आवश्यक गैसोलीन पूरी की पूरी पेट्रोलियम को स्रावित करके नहीं निकाली जा सकती। सौभाग्य से इस मतलब के लिए रसायनज्ञों ने कृतिम रूप से अणुओं को 'बनाने' के तरीके मालूम कर लिये हैं। एक तरीका है **तड़काना**। इमारतों को गर्म करने और रेलगाड़ियों, ज़हाजों के डीजेल इञ्जनों में इस्तेमाल किया जाने वाला ईंधन तेल वास्तव में ऐसे हाइड्रोकार्बन अणुओं का मिश्रण है जो गैसोलीन के अणुओं से कई गुना लम्बे होते हैं। जब इस तेल को दबाव में रखकर खूब गर्म किया जाता है तो लम्बी शृंखलाएं तड़ककर छोटी शृंखलाओं में बंट जाती हैं और अच्छी गैसोलीन का निर्माण करती हैं। इस विधि से हम कच्चे तेल के एक पीपे से लगभग दूनी गैसोलीन प्राप्त कर सकते हैं।



पेट्रोलियम से और ज्यादा गैसोलीन प्राप्त करने का एक और तरीका है। उसमें उपस्थित छोटी शृंखलाओं वाले अणुओं को जोड़कर लम्बी शृंखलाएँ बनाना। रसायनज्ञों ने ऐसा करने का तरीका मालूम कर लिया है और इस तरह जोड़कर बनाये गये अणुओं को वे 'पॉलीमर्ज़' कहते हैं। 'पॉली गैस' के विज्ञापन शायद आपने देखे होंगे। एक और तरीके में गैसोलीन, ईंधन तेल और खाना पकाने वाली गैस तीनों ही कोयले से बनाये जा सकते हैं।



५

परमाणु साथी चुनते हैं

लगभग हर बीस ज्ञात रासायनिक यौगिकों में से उन्नीस में कार्बन होता है। आपके खाने या पहनने वाली करीब-करीब हर चीज़ में कार्बन यौगिक होते हैं और यही हाल रोज़मर्रा के काम में आने वाले रंग, दवाओं, प्लास्टिक, साबुन आदि हज़ारों पदार्थों का है।

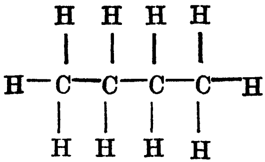
कार्बन हमारे लिए इतना उपयोगी तत्व इसलिए है कि उसके परमाणु बड़े मिलनसार हैं। वे आपस में या दूसरे प्रकार के परमाणुओं से मिलकर अणु बनाना बड़ा पसन्द करते हैं। इनमें से कुछ अणु बड़े सरल होते हैं और उनमें सिर्फ थोड़े-से परमाणु होते हैं, जबकि दूसरे बड़े जटिल और बड़े होते हैं तथा सैकड़ों परमाणुओं के मिलने से बनते हैं। आपके ही शरीर में अत्यन्त जटिल कार्बन यौगिक मौजूद हैं और रसायनज्ञ अभी भी यह मालूम करने की कोशिश कर रहे हैं कि वे कैसे बने हैं।

रसायन शास्त्र के आरम्भिक दिनों में लोगों का ख़्याल था कि कार्बन यौगिक किसी रहस्यमय **जीवन शक्ति** से बनते हैं जो सिर्फ जीवित वस्तुओं में पाई जाती है। सभी कार्बन यौगिकों को उन्होंने **'ऑर्गेनिक यौगिक'** का नाम दिया, जिसका मतलब यही है कि वे जीवित वस्तुओं (पौधे या पशु) से बने हैं।

लेकिन कुछ वैज्ञानिकों को 'जीवन शक्ति' की कल्पना पर विश्वास न था। उनमें से एक था जर्मन रसायनज्ञ वुलर। वह साधारण रसायनों को लेकर एक कार्बनिक यौगिक **यूरिया** बना सकने में समर्थ हुए जो उस समय तक केवल पशुओं के गुर्दों में पाया जाता था। इस आविष्कार से इतना तो साबित हो गया कि कार्बनिक यौगिक बिना किसी पशु या पौधे की सहायता के प्रयोगशाला में बनाये जा सकते हैं, लेकिन वुलर ने तीन साल तक अपने आविष्कार के बारे में किसी को नहीं बताया क्योंकि उन्हें डर था कि लोग उन पर विश्वास नहीं करेंगे।

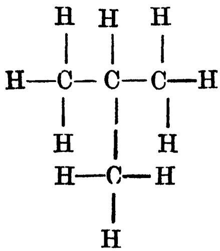
समय के साथ-साथ रसायनज्ञ अनेक कार्बनिक यौगिकों को बनाने के तरीके जानते गये। आज जीवित पदार्थों में पाया जाने वाला लगभग हर यौगिक चूना या कोयला जैसे खनिजों से बनाया जा सकता है। कार्बन यौगिकों का अध्ययन करने वाली रसायन शास्त्र की शाखा को रसायनज्ञ **कार्बनिक रसायन शास्त्र** नाम से पुकारते हैं। दूसरे सभी यौगिकों का अध्ययन जिनमें कार्बन नहीं होता, **अ-कार्बनिक रसायन शास्त्र** कहलाता है।

पिछले अध्याय से आपको याद होगा कि पेट्रोलियम अनेक प्रकार के हाइड्रोकार्बन अणुओं का मिश्रण है जिनके कार्बन परमाणु लम्बी शृंखलाओं में सम्बद्ध होते हैं। रसायनज्ञ एक काम यह कर सकता है कि कार्बन परमाणु दूसरे ढंग से अपने हाथ मिलायें। उदाहरणार्थ नीचे **साधारण ब्युटेन** का एक अणु दिया गया है।



साधारण ब्यूटेन (C_4H_{10})

दूसरे शृंखलाबद्ध हाइड्रोकार्बनों के समान इस यौगिक में भी किसी भी कार्बन परमाणु की चारों संयुजता-कड़ियों में से प्रत्येक ('हाथ') या तो किसी कार्बन परमाणु को पकड़े है या हाइड्रोजन परमाणु को। रसायनज्ञ साधारण ब्यूटेन अणु को आइसो ब्यूटेन अणु में बदल सकता है जिसका आकार यों है :



आइसो ब्यूटेन (C_4H_{10})

यहां एक कार्बन परमाणु शृंखला से हटाकर शेष तीन परमाणुओं में से बीच वाले में फंसा दिया गया है। यद्यपि दोनों अणु समान परमाणुओं से बने हैं, परन्तु उनके परमाणुओं के प्रबन्ध में भिन्नता आ जाने के कारण वे दोनों बिलकुल भिन्न वस्तुएं बन गई हैं। साधारण सूत्र दोनों का एक ही है, C_4H_{10} असली अन्तर तो उनके परमाणुओं के प्रबन्धों का चित्र खींचने पर ही मालूम होता है।

ब्यूटेन से आइसो ब्यूटेन में परिवर्तन तो केवल एक उदाहरण है कि अणु के परमाणु किस प्रकार प्रबन्धित किये जा सकते हैं।

लम्बी शृंखलाओं वाले अणुओं में तो और भी ज्यादा तरीकों से परमाणु प्रबन्धित हो सकते हैं। $C_{20}H_{42}$ तक पहुंचते-पहुंचते तो १००,००० सम्भावनाएं हो जाती हैं लेकिन इनमें से केवल कुछ ही अभी तक बनाये जा सके हैं। एक ही अणु के विभिन्न प्रबन्धों को **'आइसोमर्ज'** कहा जाता है।

वैसे इतना ही काफी नहीं है, कार्बन परमाणु दूसरे परमाणुओं से हाथ मिलाने को इतने उत्सुक रहते हैं कि कभी-कभी तो वे दो या तीन जोड़े हाथों का प्रयोग करते हैं। कोयला, लकड़ी या हाइड्रोकार्बन जब जलते हैं तब प्रत्येक कार्बन परमाणु दो ऑक्सीजन परमाणुओं से मिलकर कार्बन डाई ऑक्साइड गैस बनाता है। इस अदृश्य गैस से तुम भली भांति परिचित हो। यह सोडावाटर बनाने, आग बुझाने वाले यन्त्रों में भरने और पावरोटी फुलाने के काम में आती है। 'सूखी बर्फ़' वास्तव में ठोस कार्बन डाई ऑक्साइड ही है। कार्बन डाईऑक्साइड का आकार-सूत्र यों है :

$$O=C=O$$

देखो, कार्बन और प्रत्येक ऑक्सीजन परमाणु के बीच **दोहरी कड़ी** है।

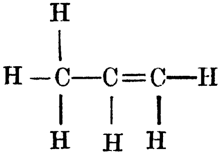
कुछ यौगिकों में दो कार्बन परमाणुओं के बीच दोहरी कड़ी होती है। इसका उदाहरण है **एथीलीन** जो एक गैस है जिसका उपयोग फल पकाने या घाव धोने में किया जाता है। इसके अणु का आकार यों है :

$$\begin{array}{cccc} H- & C= & C- & H \\ & | & | & \\ & H & H & \end{array}$$

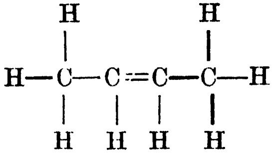
एथीलीन

एथीलीन अणु में और अधिक कार्बन या हाइड्रोजन परमाणु

फंसाकर रसायनज्ञ निम्नलिखित चीजें बना सकता है :



प्रॉपीलीन



ब्यूटीलीन

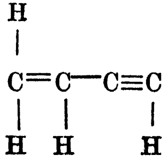
साथ ही इनके अलावा अन्य कई प्रकार के अणु भी बन सकते हैं। कुछ तो गैसोलीन बनाने की 'तड़काने' वाली विधि में बन जाते हैं। वे बहुत धीरे-धीरे जलते हैं, साधारण शृंखलाबद्ध अणुओं से तो कहीं ज़्यादा धीरे, और इस प्रकार इंजन को ज़्यादा गर्म होने से बचाये रखते हैं।

एक और प्रकार के हाइड्रोकार्बन में **तेहरी कड़ी** होती है कार्बन परमाणुओं के बीच। **एसीटिलीन** एक गैस होती है जो बड़ी तेज़ लपट के साथ जलती है। इस लपट का उपयोग धातुओं को काटने और जोड़ने में होता है। इसका आकार सूत्र है :

$$H—C \equiv C—H$$

एसीटिलीन

एक और यौगिक, जिसका उपयोग प्लास्टिक, और कृत्रिम रबड़ बनाने में होता है, में कार्बन परमाणुओं के बीच एक इकहरी, एक दोहरी और एक तेहरी कड़ी होती है :

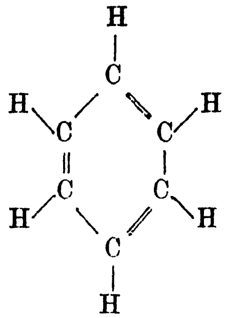


विनिल एसीटिलीन

इन सारी सम्भावनाओं के बावजूद एक यौगिकों का एक समूह ऐसा था जिसने रसायनज्ञों को वर्षों तक परेशान किया। इनमें सबसे सरल यौगिक **बेंज़ीन** है और इसका साधारण सूत्र C_6H_6 है। लेकिन कोई वैज्ञानिक इसका आकार-सूत्र मालूम कर पाने में सफल नहीं हो रहा था। परमाणुओं के संयोगों की न मालूम कितनी कल्पनाएं की गईं लेकिन कोई भी कल्पना सही सिद्ध होती नहीं मालूम पड़ती थी। अन्त में समस्या का हल निकला एक स्वप्न में। स्वप्न देखने वाले थे वैज्ञानिक **केकूले** जो अब से लगभग १०० वर्ष पूर्व रहते थे।

एक दिन, बेल्जियम में अपनी प्रयोगशाला में काम करते समय वे बहुत थक गये और अंगीठी के सामने एक कुर्सी पर बैठकर आराम करने लगे। आग की लपटों को देखते-देखते वह ऊंघने लगे और शायद सो गये। लपटें उन्हें परमाणुओं-सी दिखने और उनकी आंखों के सामने नाचने-कूदने लगीं। वे कभी-कभी लम्बी क़तारें बना लेतीं जो सांप को तरह बल खाने लगतीं। एकाएक एक सांप ने अपनी ही पूंछ अपने मुंह से पकड़ ली।

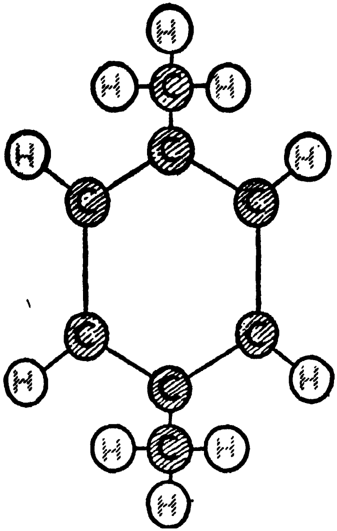
केकूले चौंककर जाग गये। बस, यही इसका रहस्य था। अत्यधिक उत्तेजित होकर उठे और मेज़ पर बैठकर रासायनिक संकेत खींचने लगे। रात में बड़ी देर तक जागते रहे और आखिरकार उत्तर निकालकर ही छोड़ा : बेंज़ीन अणु वास्तव में **परमाणुओं का छल्ला** है—ऐसी श्रृंखला जिसके दोनों सिरे आपस में मिले हैं। उन्होंने यह आकार खींचा था :



यह चित्र इस अणु विशेष के बारे में मालूम सभी तथ्यों के लिए ठीक बैठता था। इसीलिए इसे **बेंजीन का छल्ला** कहा गया। यह अनेक प्रकार के अणुओं को बनाने की एक महान् योजना थी।

सारे संसार के रसायनज्ञ अब नयी-नयी चीजों को बनाने के लिए आकार सूत्रों का प्रयोग करते हैं। असल में नये-नये अणु वे पहले ही **चित्रित कर लेते** हैं। जैसे कोई इंजीनियर मकान बनाने से पहले उसका पूरा ख़ाका तैयार कर लेता है। इन डिज़ाइनों को बनाने में लकड़ी के टुकड़े इस्तेमाल करने में भी रसायनज्ञों को कोई शर्म नहीं लगती। असल में वे लकड़ी या प्लास्टिक के रंगीन गोले परमाणुओं के लिए प्रयोग करते हैं और कड़ियों के लिए छोटी-छोटी छड़ें जो गोलों में बने छेदों में फंस जाती हैं। इस तरह वे बता सकते हैं कि अणुओं को कैसे बदला जाय—एक परमाणु को निकालकर उसकी जगह पर किसी दूसरे प्रकार का परमाणु या सम्पूर्ण परमाणु-समूह रखकर कैसे बिलकुल नयी चीज़ बना ली जाय।

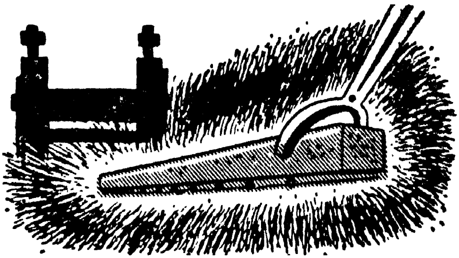
नीचे **जाइलीन** नामक यौगिक का गेंद-छड़ वाला मॉडल दिया गया है:



यह किसी खूबसूरत टेलीविजन-एरियल-सा मालूम पड़ता है। रसायनज्ञ जब इस पदार्थ को बनाना चाहता था तो स्वयं से बोला था : "क्या हम बेंजीन के छल्ले के ऊपरी और नीचे वाले हाइड्रोजन परमाणुओं को हटाकर CH_3 समूह रख सकते हैं ?" वह पहले से बता सकता था कि नया यौगिक किस प्रकार का होगा। तब प्रयोग-शाला में जाकर इसे बनाने का तरीका उसने निकाल लिया।

मॉडल की मदद से योजना बनाना पहला काम है। इसके बिना कार्बनिक रसायन शास्त्र का काम ही नहीं चल सकता ; सच तो यह है कि रसायनज्ञों की ऐसी योजनाओं के बिना हमारे घर, कारखानों या अस्पतालों में काम आने वाली उपयोगी वस्तुएं बनाई ही नहीं जा सकती थीं।

रसायनज्ञ इस्पात के कारखाने में



अगर आप कभी पिट्सबर्ग, गैरी, क्लीवलैंड या बरमिंघम गये होंगे तो आपको मालूम होगा कि इस्पात का कारखाना कितनी चहल-पहल और व्यस्तता वाली जगह है। सौ-सौ फुट से भी ज़्यादा ऊंची **'ब्लास्ट भट्टियों'** का धुआं आकाश में ऊंचाई तक मंडराता रहता है। पास ही बड़ी-बड़ी 'क्रेनों' की बाल्टियां बन्दरगाहों में खड़े जहाजों से खनिज लोहा निकालती रहती हैं। लम्बी, नीची इमारतों में कान फाड़ने वाले शोर के बीच सफेद-गर्म इस्पात चादरों, पटरियों, पाइपों और सरियों में ढाला जाता है। रात में, लपटों और चिन्गा-रियों से मीलों तक आसमान प्रकाशमय हो उठता है।

ऐसा मालूम होता है कि धुएं और शोर से भरे इस्पात के कारख़ाने के भीतर जो कुछ होता रहता है उसका रसायनज्ञों से कोई सम्बन्ध नहीं है। लेकिन सच बात तो यह है कि इस्पात का बनाना वास्तव में रासायनिक परिवर्तनों की एक श्रृंखला है और आधुनिक इस्पात कारख़ानों में अनेक रसायनज्ञ काम करते हैं। कारख़ानों से हरसाल निकलने वाले करीब दो करोड़ टन इस्पात की लगातार देखभाल यही रसायनज्ञ करते हैं। यह इस्पात इतना

होता है कि अमेरिका के हर आदमी, औरत और बच्चे को लगभग पौन टन वजन का १७ इंच का घन दिया जा सकता है ।

आधुनिक जीवन में इस्पात का क्या मूल्य है इस पर संदेह नहीं किया जा सकता । यह हमारा सबसे मज़बूत पदार्थ है । इसके बिना ऊंची-ऊंची इमारतें, लम्बे-लम्बे पुल, रेलगाड़ियां, जहाज़, मोटरें या विमान आदि कोई भी चीज़ संभव नहीं हो सकती । खेती-बाड़ी करने की मशीनें और अनाज इकट्ठा करने वाले टब भी नहीं बनाये जा सकते और न ही छापेख़ाने, बिजली की मशीनें, टेलीफोन तथा दूसरे औज़ार ही बन सकते हैं ।

इस्पात कहां से आता है ? इस्पात असल में लोहा और कार्बन तथा अन्य तत्वों के थोड़े-थोड़े अंशों का मिश्रण है । जमीन के भीतर लोहा धातु के रूप में नहीं बल्कि खनिज लोहे के रूप में पाया जाता है । **खनिज लोहा** साधारणत: लोहे और आक्सीजन का यौगिक है । मिनेसोटा, अलबामा और अन्य कई राज्यों में यह लाल, भूरा खनिज काफ़ी मात्रा में पाया जाता है । धरती से खोद लिये जाने के बाद खनिज को कारख़ानों में भेज दिया जाता है जहां धातु को उसके रासायनिक सहयोगी ऑक्सीजन से अलग किया जाता है ।

ऑक्सीजन के साथ मिलकर बनने वाले किसी धातु के यौगिक को उसकी **ऑक्साइड** कहा जाता है । खनिज लोहा वास्तव में **लोहे की ऑक्साइड** ही है और लोहे पर लगने वाली जंग से ज़्यादा भिन्न नहीं है । ऑक्साइड को तोड़कर धातु अलग करने की क्रिया **'स्मेल्टिंग'** कहलाती है । लेकिन ऑक्सीजन के परमाणु लोहे के परमाणुओं की बड़ी मज़बूती से पकड़े रहते हैं, इसलिए उसके साथ थोड़ा कार्बन मिलाकर ऑक्सीजन को बाहर निकलने के लिए बाध्य किया जाता है । यह क्रिया ब्लास्ट भट्ठियों में खनिज लोहे के साथ **कोक** मिलाकर

की जाती है। कोक कोयले को स्रावित करके निकाला जाता है और लगभग शुद्ध कार्बन होता है।

तब कोक को जलाने के लिए मिश्रण में गर्म हवा की धारा प्रवाहित की जाती है (इसी कारण इस भट्टी का नाम ब्लास्ट भट्टी पड़ा है)। इस प्रकार जलने से गर्मी तो पैदा ही होती है साथ ही **कार्बन मोनॉक्साइड** नामक गैस भी पैदा होती है—यह वही बड़ी ज़हरीली गैस है जो मोटरों के पीछे वाले नलों से बाहर निकलती है। ब्लास्ट भट्टी में कार्बन मोनाक्सॉइड एक उपयोगी काम यह करती है कि लोहे की ऑक्साइड से ऑक्सीजन बाहर खींच लेती है और लोहा बच रहता है जो बूंदों के रूप में इकठ्ठा होकर भट्टी की तली पर गिर पड़ता है।

खनिज लोहे में कुछ थोड़ी मात्रा में अन्य धातुएं भी मौजूद रहती हैं जिन्हें खनिज को 'स्मेल्ट' करने से पहले निकाल देना अत्यन्त आवश्यक है। यह काम ब्लास्ट भट्टी में चूना डालकर किया जाता है। चूना सिलिकन और दूसरी धातुओं से मिलकर एक ख़राब पदार्थ बनाता है जिसे **'स्लैग'** कहा जाता है।

एक बार जब ब्लास्ट भट्टी का काम शुरू कर दिया जाता है तो महीनों बल्कि सालों तक वह लगातार काम करती जाती है। हर मिनट में इसमें एक टन से ज़्यादा खनिज, कोक और चूना डाला जाता है। इसी बीच आपके पूरे घर को भर सकने के बराबर हवा को १००० अंश तक गर्म किया जाता है और मिश्रण में प्रवाहित किया जाता है। हर छः घण्टे बाद भट्टी की तली में इकट्ठा होने वाला सफ़ेद-गर्म द्रव लोहा बाहर बहा दिया जाता है। इसे सांचों में भेजा जा सकता है जहां **'पिग आयरन'** के बड़े-बड़े खंड बन जाते हैं या विशेष रूप से बनाई गई कारों में द्रव के रूप में ही इस्पात बनाने के

लिए ले जाया जाता है। एक बड़ी भट्टी एक घण्टे में ५० टन से ज्यादा लोहा तैयार कर सकती है।

हर बार जब पिघला हुआ लोहा ब्लास्ट भट्टी से बाहर निकाला जाता है, उसका एक नमूना अलग करके जमा लिया जाता है और रासायनिक प्रयोगशाला में ले जाया जाता है। रासायनिक प्रयोगशाला में विश्लेषण करके पता लगाया जाता है कि लोहे में और कौन-से तत्व मिले हैं। पहले साधारण रासायनिक विधियों से लोहे में मिले हुए तत्वों का पता लगाने में कई घण्टे लग जाया करते थे। लोहा सबसे पहले अम्ल में घोला जाता था। तब अनेक रसायन डालकर नमूने में मिले तत्वों के यौगिक बनाये जाते थे। इन यौगिकों को पहचान कर रसायनज्ञ यह बता सकने में समर्थ होता था कि लोहे के नमूने में कौन-कौन-से तत्व मौजूद हैं। यह सब करने में घंटों लग जाया करते थे।

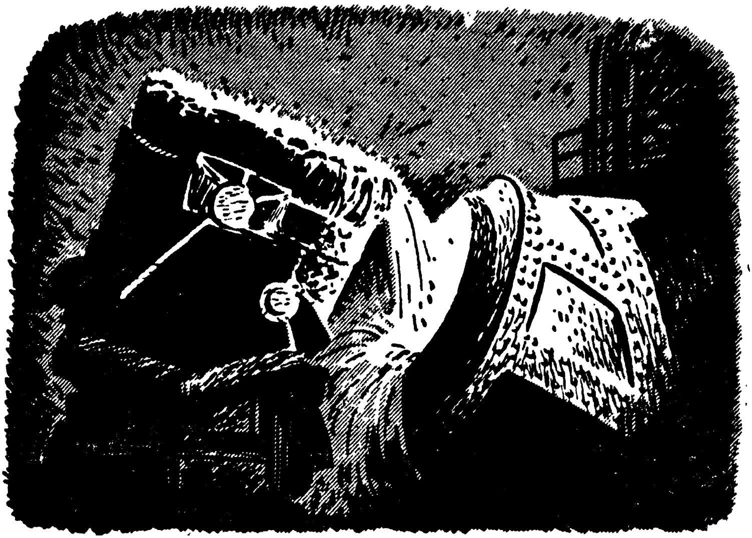
आजकल रसायनज्ञ **'स्पेक्ट्रोग्राफ़'** नामक एक यंत्र की मदद से इस काम को बड़ी आसानी से कर लेते हैं। लोहे के नमूनों के दो टुकड़ों के बीच वह एक बिजली की धारा कुदा देता है। इस चिनगारी से उत्पन्न तेज़ रोशनी स्पेक्ट्रोग्राफ़ में पहुंचती है, जो उसके रंग अलग-अलग कर देता है। कुछ ही मिनटों में रसायनज्ञ के पास इन रंगों का विवरण एक फोटोग्राफ़ में रेखाओं के रूप में आ जाता है।

हर एक रासायनिक पदार्थ से एक विशेष प्रकार का रेखाओं का समूह तैयार होता है। इसलिए सिर्फ उन रेखाओं को देखकर ही रसायनज्ञ बता देता है कि लोहे के नमूने में किस तत्व की कितनी मात्रा मौजूद है। यह जानना उसके लिए बड़ा ज़रूरी है क्योंकि इसी से उसे मालूम होता है कि अनेक प्रकार का इस्पात बनाने के लिए उसे लोहे में क्या जोड़ना या निकालना है।

ब्लास्ट भट्टी से निकलने के बाद लोहे में कार्बन, मैंगनीज, सिलिकन, फ़ास्फ़ोरस और गंधक थोड़ी-थोड़ी मात्रा में मौजूद रहते हैं। यह **'कास्ट आयरन'** कहलाता है और सिंक, नहाने के टब, पाइप तथा मशीनों के पुर्ज़े बनाने के काम आता है। लेकिन यह बड़ी जल्दी टूट जाता है, तड़क जाता है, इसलिए दूसरे कामों में नहीं लाया जा सकता।

वैज्ञानिकों ने पता लगा लिया है कि ब्लास्ट भट्टी से निकला लोहा, अपने में मिले कार्बन के कारण ही चटख़ने वाला हो जाता है। इसलिए लोहे को इस्पात में बदलने के लिए अधिकांश कार्बन को जलाकर ऑक्साइड बना दिया जाता है। ऐसा करने का एक तरीका है एक बड़े अंडे के आकार के बर्तन में, जिसे **बेसीमर कन्वर्टर** कहा जाता है, लगभग २० टन द्रव लोहा डाल दिया जाता है। १०० बरस पहले बेसीमर नामक एक व्यक्ति ने इस यंत्र का आविष्कार किया था, जिसके नाम पर ही इसका नाम पड़ गया है। कन्वर्टर तब सीधा खड़ा कर दिया जाता है और द्रव लोहे में हवा की एक धारा प्रवाहित की जाती है। इससे कार्बन, सिलिकन और मैंगनीज जल पड़ते हैं और लगभग १०० फुट ऊंची एक लपट उठती है जिससे आंखों को चकाचौंध कर देने वाली चिनगारियां छूटती हैं। लगभग १५ मिनट में लपट खत्म हो जाती है और इस्पात बनाने वाला समझ जाता है कि सारी अशुद्धियां जल चुकी हैं, लोहा इस्पात में बदल चुका है। कन्वर्टर तब नीचे झुका दिया जाता है, हवा की धारा बन्द कर दी जाती है और इस्पात एक बहुत बड़े **तसले** में डाल दिया जाता है।

अधिक शुद्ध इस्पात बनाने के लिए **'ओपेनहर्थ भट्टी'** का प्रयोग किया जाता है। यह भट्टी एक बड़ी तश्तरी-सी बनी होती है। कई



द्रव लोहा बेसीमर कन्वर्टर में डाल दिया जाता है।

सौ टन लोहा इसमें डाल दिया जाता है और इसी के साथ चूना, लोहे की छीलन, खनिज लोहा भी मिला दिये जाते हैं। तब जलती हुई गैस या तेल की लपटें द्रव लोहे में प्रवेश कराई जाती हैं जिससे उसका तापक्रम ३००० अंश हो जाता है। इतनी ज़्यादा गर्मी अशुद्धियों को जला डालती है और लगभग बारह घंटे बाद तैयार इस्पात तसलों में वहा दिया जाता है। इसो बीच फ़ास्फ़ोरस लोहे में मौजूद दूसरे पदार्थों के साथ मिलकर 'स्लैग' के रूप में बाहर निकाल दिया जाता है और बाद में खाद बनाने में इस्तेमाल किया जाता है।

इस्पात चाहे कन्वर्टर में बनाया गया हो, चाहे भट्टी में या चाहे

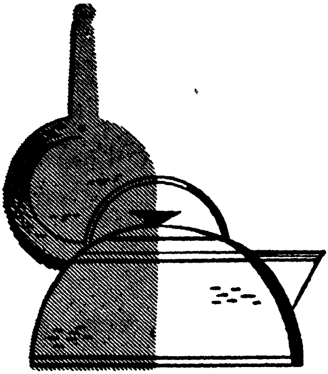
बिजली की भट्टी में, रसायनज्ञ उसकी रासायनिक बनावट को बड़ी सावधानी से देखते हैं। उसे भट्टी से बाहर निकालने के बाद किसी विशेष काम के लिए उपयुक्त इस्पात बनाने के लिए उसमें दूसरे पदार्थों की निश्चित मात्राएं डाल दी जाती हैं। रसायनज्ञ बिलकुल रसोइये का काम करता है और इस्पात बनाने वालों के लिए दूसरी धातुओं को मिलाकर इस्पात बनाने के नुस्खे तैयार करता है। धातुओं का इस प्रकार का मिश्रण **संकर** कहलाता है।

उदाहरण के लिए 'सेफ़' बनाने को बड़े मजबूत इस्पात की ज़रूरत होती है। रसायनज्ञ कहेगा : "१० प्रतिशत मैंगनीज डाल दो।" या "६ प्रतिशत निकिल मिला दो।" बर्तन या डाक्टरी औज़ार बनाने वाले कारीगर **स्टेनलेस स्टील**—यानी ऐसा इस्पात जो रसोई या अस्पताल में प्रयोग किये जाने पर भी मोर्चा न खाये—चाहते हैं। इस्पात बनाने वाला कच्चे इस्पात में थोड़ा-सा क्रोमियम डालकर ऐसा इस्पात तैयार कर लेता है। बिजली के इंजनों में काम आने वाले चुम्बक सिलिकन पड़े हुए इस्पात से बनाये जाते हैं। सिलिकन की ही भिन्न मात्रा डालकर मोटर की कमानियां बनाने वाला इस्पात तैयार किया जाता है। वुलफ्रैम, मौलिब्डेनम, वैनेडियम आदि तत्वों से दूसरे प्रकार के संकर तैयार किये जाते हैं। साधारणतः इस्पात के गुणों में बड़े से बड़ा अन्तर लाने के लिए इन तत्वों की थोड़ी से थोड़ी मात्रा की ज़रूरत पड़ती है।

सांचों में डाल दिये जाने के बाद इस्पात बड़े-बड़े टुकड़ों में जम जाता है जिन्हें **इंगट** कहा जाता है। रोलिंग मिल में इन्हें बड़े-बड़े रोलरों के बीच आगे-पीछे चलाते हुए दबाया जाता है और इस तरह इस्पात की चादरें, छड़ें, पटरियां या गर्डर बनाये जाते हैं। किसी भी छड़ को छोटे से छोटे छेदों में से निकालकर तार बना लिये

जाते हैं। या किसी मोटी धन्नी को खोखला करके पाइप बना लिये जाते हैं। गर्म इस्पात की गोल चकत्ती दबाने वाली मशीन में दबाकर रेलगाड़ियों के पहियों के रूप में बदली जा सकती है। यह एक बड़े जहाज़ के बज़न के बराबर दबाव से दबती है।

ये तथा हज़ारों और छोटी-सी सुई से लेकर बड़े-बड़े इंजनों तक सभी इस्पाती चीज़ें हमारे उपयोग में आज सिर्फ़ इसीलिए आ रहे हैं क्योंकि हम इस आश्चर्यजनक पदार्थ के रासायनिक गुणों के बारे में इतना अधिक जान पाये हैं!



७

कुछ अन्य उपयोगी धातुएं

मिट्टी और चट्टानों में पाई जाने वाली वस्तुओं का लगभग बारहवां हिस्सा अल्यूमिनियम है। लोहे के समान यह तत्व भी हमेशा दूसरे तत्वों, विशेषत: ऑक्सीजन, के साथ मिलावट में पाया जाता है, लेकिन अल्यूमिनियम को उसके यौगिकों से अलग करना लोहे को उसके खनिज से निकालने से कहीं ज्यादा मुश्किल है। यही कारण है कि पृथ्वी का एक अत्यन्त साधारण तत्व होते हुए भी लगभग १०० वर्ष पहले तक इसके बारे में लगभग नहीं के बराबर ज्ञान था, जबकि लोहा हजारों बरसों से उपयोग में लाया जा रहा था।

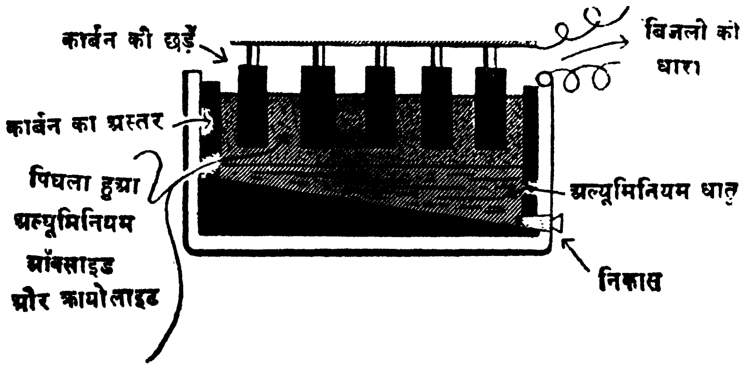
नेपोलियन जब दावतें दिया करते थे तो सबसे अधिक सम्मानित व्यक्तियों को ही अल्यूमिनियम के छुरी-कांटे दिये जाते थे। कम सम्मानित अतिथियों को सोने-चांदी के छुरी-कांटों से ही सन्तोष करना पड़ता था। एक समय में अल्यूमिनियम का दाम लगभग २५०० रुपये प्रति पौंड था। अब यह दो-ढाई रुपये पौण्ड मिलता है। लगभग ५० लाख टन अल्यूमिनियम हर साल इस्तेमाल किया जाता है।

एकाएक हो गये इस बड़े परिवर्तन का कारण था अब से करीब सत्तर साल पहले रसायन शास्त्र के २३ वर्षीय विद्यार्थी चार्ल्स हाल की नई खोज। एक दिन ओहायो के ओबर्लिन कालेज में वह

रसायन शास्त्र पर प्रवचन सुन रहा था। अल्यूमिनियम के बारे में प्रोफेसर साहब बता रहे थे। उन्होंने एक स्थल पर कहा: "अगर कोई आदमी औद्योगिक पैमाने पर अल्यूमिनियम तैयार करने की विधि मालूम कर सके तो वह मानवता को वरदान देगा और साथ ही अपने लिए अतुल सम्पत्ति खड़ी कर लेगा।"

नौजवान हाल पर इस बात का बड़ा प्रभाव पड़ा और उसने इस समस्या को हल करने का निश्चय कर लिया। उसने कुछ रासायनिक उपकरण उधार लेकर अपने घर के पीछे एक लकड़ी के शेड में अपनी प्रयोगशाला स्थापित की। दो वर्ष बाद हांफता हुआ वह प्रोफेसर के दफ्तर में पहुंचा और उनकी मेज पर चांदी-सी सफेद धातु के कुछ टुकड़े रखकर खड़ा हो गया। अल्यूमिनियम बन गया था। खोज सफल हुई थी। थोड़े ही समय के भीतर अल्यूमिनियम बनाने की हाल-विधि का प्रयोग हर जगह किया जाने लगा। यही विधि हर जगह काम में लाई जाती है।

प्रारम्भ-विन्दु है खनिज अल्यूमिनियम **बॉक्साइट**, जो धातु की

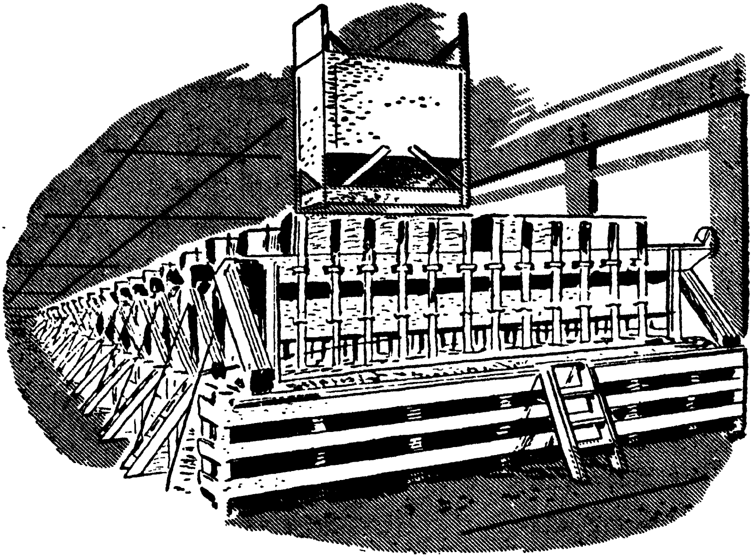


कच्चे अल्यूमिनियम से अल्यूमिनियम धातु बिजली द्वारा पृथक की जाती है।

ऑक्साइड है। हाल ने पता लगाया था कि यह ऑक्साइड अल्यूमिनियम के ही दूसरे यौगिक **क्रायोलाइट** में घुल जाती है, यदि क्रायोलाइट को पिघलाया जाय। तब उसने इस द्रव मिश्रण में बिजली की धारा प्रवाहित की जिससे टब की तली में द्रव अल्यूमिनियम धातु इकट्ठी होने लगी। चित्र में अल्यूमिनियम के कारखाने में प्रयोग किया जाने वाला उपकरण दिखाया गया है। इस विधि को **विद्युत्-विच्छेदन** कहा जाता है। बिजली की धारा द्वारा स्वतन्त्र की गई ऑक्सीजन कार्बन-दण्डों के कार्बन से मिलकर कार्बन डाई आक्साइड बनाती है। पिघला हुआ अल्यूमिनियम तब बहाकर सांचों में ले जाया जाता है और ठोस हो जाने दिया जाता है। एक कारखाने में इस तरह के कई सौ टब हो सकते हैं और उनमें कुल मिलाकर एक बड़े शहर के बराबर बिजली खर्च होती है।

अल्यूमिनियम अपने हल्केपन के कारण विशेषरूप से उपयोगी है। यह लोहे का लगभग एक-तिहाई भारी है। लेकिन तांबा और मैगनीशियम जैसी धातुओं से मिलकर जो संकर बनाता है वे करीब-करीब इस्पात के बराबर ही मजबूत होते हैं। अपने हल्केपन के कारण अल्यूमिनियम के संकर विमानों, मोटरों, बसों, रेलगाड़ियों के अंगों तथा इमारतों की दीवारें बनाने के भी काम आते हैं।

अल्यूमिनियम में एक और गुण है। उसके ऊपर ऑक्साइड की एक परत जम जाती है, जिससे मौसम का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यह परत एक इंच का करोड़वां भाग मोटी होती है, लेकिन धातु से उसी तरह चिपकी रहती है जिस तरह हमारे शरीर पर चमड़ा। दूसरी ओर जब लोहे पर जंग लगती है तो ऑक्साइड गिर पड़ती है और जल्दी ही सारा टुकड़ा जंग बनकर बरबाद हो जाता है।



इस प्लान्ट में आप अल्यूमिनियम तैयार करने वाली खानों की पंक्तियां देखते हैं।

अल्यूमिनियम के सभी उपयोगों का वर्णन करना असंभव है। दूर-दूर तक बिजली ले जाने वाले तारों में यह तांबे का स्थान ग्रहण करता जा रहा है। बर्तन आदि बनाने के लिए यह एक आदर्श धातु है। वैकुअम क्लीनर, टोस्टर तथा रेफरीजरेटर के अनेक भाग इसी से बनाये जाते हैं। चीविंग गम (एक मिठाई) के ऊपर जो अल्यूमिनियम की परत जमी रहती व [illegible] े के सोलहवें हिस्से के बराबर मोटी होती है। इससे कुछ मोटी परत सिगरेट तथा कई खाद्य पदार्थों को हवा बन्द करने के काम में आती है। धातु के छोटे-छोटे टुकड़ों से अल्यूमिनियम रंग बनाये जाते हैं। खगोलशास्त्री अपने दूर-दर्शकों के शीशों में चांदी की जगह शुद्ध अल्यूमिनियम की

परत चढ़वाते हैं। इस आश्चर्यजनक धातु के नये से नये उपयोग हर साल निकलते आ रहे हैं। कई जगह तो यह आखिरकार इस्पात का स्थान ले लेगी।

लगभग तीन चौथाई तत्व धातु हैं। अल्यूमिनियम के साथ-साथ तांबा भी एक बड़ी मनोरंजक और उपयोगी धातु है। यह उन धातुओं में से है जिन्हें लोग बहुत पहले से जानते हैं, शायद इसलिए कि यह बिना दूसरी धातुओं से मिले साफ-साफ टुकड़ों में पाई जाती है। कई हज़ार वर्ष पहले मिस्रवासी जान पाये थे कि वे इस लाल-भूरी धातु से भाले, हंसिये, औजार और गहने बना सकते हैं। पत्थरों को काट-काटकर चीजें बनाने से कहीं ज्यादा अच्छा यह है कि मुलायम तांबे को पीटकर अपने काम का बना लिया जाय। वे तांबे, टीन और जस्ते के एक संकर **कांसे** से अनेक चीजें बनाया करते थे। बाद में वे सिर्फ तांबे और जस्ते का संकर **पीतल** बनाना सीख गये।

यद्यपि तांबा कहीं-कहीं पर धातु के टुकड़ों के रूप में पाया जाता है फिर भी अधिकांश तो यह गंधक या ऑक्सीजन के साथ मिलकर खनिज के रूप में पाया जाता है। जमीन से निकालकर खनिज को पीसकर धो लिया जाता है। तब इसे पिघलाने वाली भट्टी में भेजकर गंधक अलग करने के लिए ऑक्सीजन के साथ मिलाया जाता है। तब ऑक्साइड को ब्लास्ट भट्टी में रखकर धातु को ऑक्सीजन से अलग कर लिया जाता है। सबसे अन्त में यह कन्वर्टर में जाता है जहां इसमें हवा की धारा प्रवाहित की जाती है, और कुछ अशुद्धियां दूर हो जाती हैं। यह विधि इस्पात बनाने की विधि के समान ही है।

लगभग आधा उत्पादित तांबा बिजली-उद्योग में खर्च हो जाता है क्योंकि बिजली की धारा दूसरी धातुओं की अपेक्षा तांबे में ज्यादा



तांबे की खान में ऊपरी सतह पर से ही कच्चा तांबा मिलने लगता है।

आसानी से दौड़ सकती है। लेकिन इस काम के लिए तांबे का अत्यधिक शुद्ध होना ज़रूरी है। इसलिए इसे विद्युत्-विच्छेदन की क्रिया द्वारा अल्यूमिनियम की तरह साफ किया जाता है। फलस्वरूप ९९.९५ प्रतिशत शुद्ध तांबा हमें प्राप्त होता है। टबों की तली में बचने वाली अशुद्धियां भी कीमती होती हैं। उनमें सोना और चाँदी मौजूद होते हैं जो बाद में अलग किये जा सकते हैं।

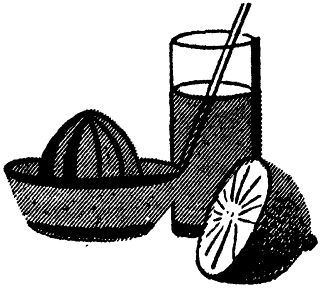
बिजली के तारों के अलावा तांबे के अन्य उपयोग भी होते हैं। आपके ही घर में तांबे के परदे और खाना बनाने के बरतन होंगे। तांबे की नलियों को बॉयलरों, पानी के पाइपों और घर गरम करने में इस्तेमाल किया जाता है। एक मोटरकार में लगभग ४५ पौंड

तांबा होता है । एक बड़ा जहाज़ बनाने में लाखों पौंड तांबा खर्च होता है ।

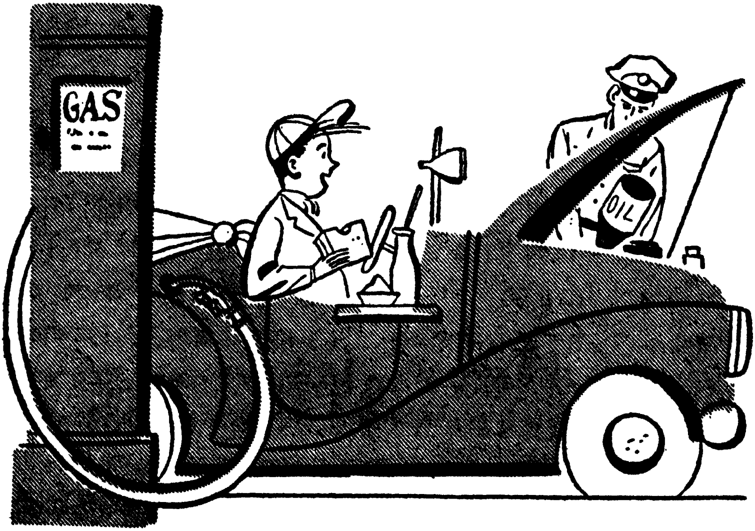
हवा में खुला रखने पर अल्यूमिनियम की तरह तांबे के ऊपर भी एक सुरक्षा-परत जम जाती है । हवा में मौजूद पानी की भाप और कार्बन डाई आॅक्साइड तांबे के साथ मिलकर एक हरी परत का निर्माण करती हैं । न्यूयार्क का स्वतंत्रता स्मारक आपस में गुंथे तांबे के ३०० टुकड़ों से बना है । इस हरी परत से उसका आकर्षण तो बढ़ ही गया है साथ ही वह सुदृढ़ भी हो गया है ।

८

आदमी का शरीर इंजन है



आपके शरीर की बनावट किसी इंजन की बनावट की तरह है। जो खाना आप खाते हैं वह ईंधन है, जो आपके शरीर को जीवित और सक्रिय रखता है। जिस तरह इंजन में जलने वाला ईंधन उसे इतनी शक्ति देता है कि वह पूरी रेलगाड़ी खींच सके या भार उठा सके या मशीनें चला सके, ठीक उसी तरह भोजन आपको काम करने



मनुष्य-शरीर के लिए भोजन ईंधन का काम करता है।

और खेलने की शक्ति प्रदान करता है। भाप या गैसोलीन से चलने वाला इंजन बिना बिगड़े, ठीक तरह से अपना काम करता रहे, यही हम चाहते हैं। उसका कोई पुर्ज़ा खराब हो जाता है तो हम उसे रोककर उसकी मरम्मत कर लेते हैं। लेकिन आदमी के शरीर के साथ पहली शर्त यह है कि वह ज़िन्दगी भर बिना रुके काम करता रहे और साथ ही साथ उसकी मरम्मत भी होती रहे।

शरीर में भोजन ठीक उसी तरह जलता [अर्थात् **ऑक्सीकरित** (Oxidise) होता] है जैसे किसी इंजन में कोयला, तेल या गैसोलीन जलता है। फ़र्क यही है कि जानदार प्राणियों में होने वाली रासायनिक क्रियाएं अधिक जटिल होती हैं। निश्चय ही जीव रसायन अथवा वनस्पति रसायन से ज़्यादा महत्वपूर्ण और कोई विषय हमारे लिए नहीं है। हमारा जीवन और स्वास्थ्य दोनों विज्ञान की इसी शाखा पर निर्भर हैं, जिसे **जीव रसायन** कहा जाता है।

आदमी के इतिहास के आरम्भिक दिनों में लोगों को भूख लगती थी तो वे आसानी से मिल सकने वाली कोई भी चीज़ खा लिया करते थे। संसार के अनेक भागों में रहने वाली जंगली जातियां आज भी घड़ियाल का मांस, चमगादड़, कीड़े, टिड्डे आदि खाती हैं। सभ्य देशों में भोजन का चुनाव हम अपनी स्वाभाविक आदतों और भूख के अनुसार करते हैं। लेकिन हम यह भी जानते हैं कि आदर्श, सन्तुलित भोजन चुनने के भी कुछ नियम होते हैं। अमेरिका में अच्छा खाना काफी मात्रा में मिलता है और सौभाग्य से हर आदमी उसे खा सकता है।

रसायनज्ञों ने पता लगाया है कि शरीर को स्वस्थ रखने के लिए कुछ प्रकार के खाद्य पदार्थ जरूरी होते हैं। एक आवश्यक समूह में मांड और चीनी सम्मिलित हैं। ये दोनों ही कार्बन, हाइड्रोजन और

ऑक्सीजन के यौगिक होते हैं और **कार्बोहाइड्रेट** कहलाते हैं।

चीनी की कई किस्में होती हैं। कुछ फलों के रस में पाई जाने वाली चीनी **ग्लूकोज** है। इसका सूत्र $C_6H_{12}O_6$ है। लेकिन नाश्ते के साथ खाई जाने वाली चीनी **सूक्रोज** की रासायनिक बनावट कुछ ज़्यादा जटिल होती है। इसका सूत्र $C_{12}H_{22}O_{11}$ है। शहद, तरकारियों और दूध में भी दूसरे प्रकार की चीनियां होती हैं और प्रत्येक का रासायनिक सूत्र अलग-अलग होता है। मांड का सूत्र $C_6H_{10}O_5$ है और वह रोटी, आलू, अन्न की दालों, चावल और अन्य अनाजों में पाया जाता है।

शरीर के काम आने के लिए यह आवश्यक है कि मांड और चीनी दोनों ही किसी प्रकार खून की नलिकाओं में पहुंच जायँ। चीनी तो आसानी से धमनियों में पहुंच सकती है क्योंकि वह पानी में घुल जाती है और आंतों की दीवारों को भेद कर सीधे खून की नलिकाओं में पहुँच जाती है। लेकिन मांड के लिए घुलने से पहले चीनी में बदलना ज़रूरी है। खाना पचाने वाले रस मांड को चीनी में बदलने का काम करते हैं—सिर्फ़ माड़ के एक अणु में पानी का एक अणु जोड़ कर।

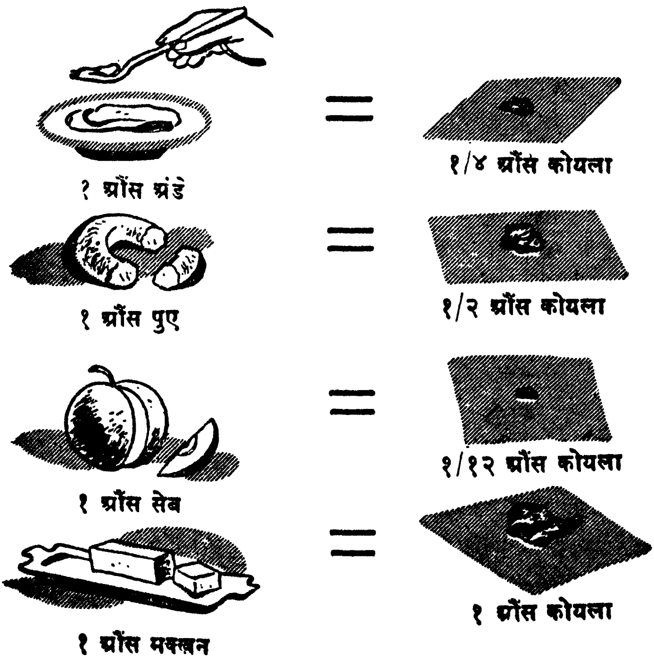
माड़	C_6	H_{10}	O_5
पानी		H_2	O
ग्लूकोज	C_6	H_{12}	O_6

इस तरह बनी ग्लूकोज़ अब हर चीनी की तरह रक्त की नलिकाओं में पहुंच जाती है।

कार्बोहाइड्रेट ही हमारे शरीर को अधिकांश गरमी और शक्ति प्रदान करते हैं। गर्मी भोजन के धीरे-धीरे चलने या ऑक्सीकरण से पैदा होती है। जिस हवा में हम सांस लेते हैं उसकी ऑक्सीजन फेफड़ों

से होकर खून की नलिकाओं में पहुंच जाती है, जहाँ वह चीनी से मिलकर कार्बन डाई ऑक्साइड और पानी बनाती है (जो काम में नहीं आते) तथा गर्मी पैदा करती है। एक और भी प्रकार के खाद्य-पदार्थ, जिन्हें **चर्बी** कहते हैं, मुख्यत: मक्खन और वनस्पति तेलों जैसे खाद्यपदार्थों से प्राप्त होते हैं। इनका भी ऑक्सीकरण शरीर में हो जाता है। चर्बियां एक आवश्यक काम हमारे लिए यह करती हैं कि कुछ विटामिनों को हमारे शरीर के विभिन्न अंगों में पहुंचाती हैं।

एक पौंड किसी भोजन के जलने से **ताप ऊर्जा** की कुछ मात्रा

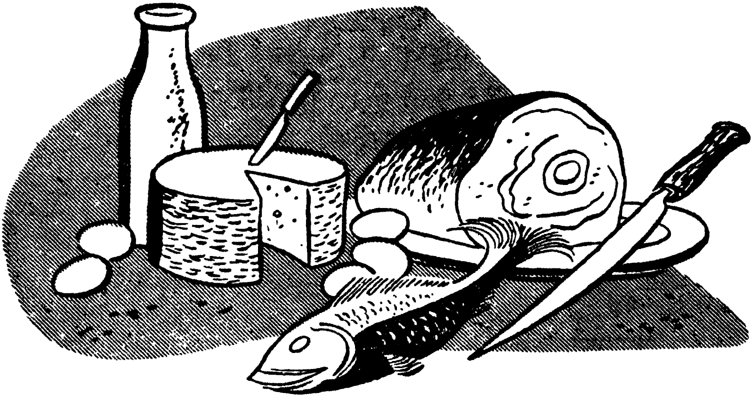


पैदा होती है, फिर चाहे वे भोजन शरीर के भीतर हों या बाहर। वैज्ञानिक विशेष प्रकार की भट्टियों में जलाकर विभिन्न भोज्य-पदार्थों की ताप-क्षमता मालूम करते हैं। वे भोज्य पदार्थों का दर्जा **कैलारियों** में व्यक्त करते हैं। उदाहरणार्थ, निम्नलिखित पदार्थों में से प्रत्येक की एक ऑौंस मात्रा से आपको नीचे उनके नामों के बराबर में लिखी ताप ऊर्जा प्राप्त हो सकती है।

खाद्यपदार्थ	*कैलारियां*
अंडे	६३
डाइनट	१३२
सेब	१९
मक्खन	२४०

औसत व्यक्ति हर रोज़ लगभग २,५०० कैलारी खर्च करता है। अगर आप ज़रूरत से ज़्यादा खाना खा लें तो अतिरिक्त भोजन जलता नहीं, बल्कि आपके शरीर में ही चमड़ी के भीतर चर्बी की परतों के रूप में इकट्ठा होता जाता है। यही वजह है कि मोटे-ताज़े आदमियों को खाने-पीने के मामले में बड़ा सतर्क रहना पड़ता है।

अब हम भोजन के एक अत्यन्त आवश्यक अंग **प्रोटीन** की चर्चा करेंगे। आपके शरीर के सभी अंग छोटी-छोटी **कोशिकाओं** के मिलाने से बने हैं। जैसे-जैसे शरीर बढ़ता जाता है उसमें नई कोशिकाएं जुड़ती जाती हैं। शरीर की वृद्धि और घिसी हुई या टूटी-फूटी कोशिकाओं की मरम्मत के लिए प्रोटीनों का होना बड़ा जरूरी है। दूध, पनीर, अंडों, गोश्त और मछली में हमें काफ़ी प्रोटीन मिलती है। गेहूं, सेम और मटर में प्रोटीन कुछ कम मात्रा में होती है। प्रोटीनों की रासायनिक बनावट बड़ी जटिल होती है और उनमें कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन और नाइट्रोजन मौजूद रहते हैं।



दूध, पनीर, अंडों, गोश्त और मछली में प्रोटीन ज्यादा होती है।

किसी-किसी में गंधक और फ़ास्फ़ोरस भी होते हैं। कभी-कभी एक प्रोटीन अणु में कुल मिलाकर सैकड़ों या हज़ारों परमाणु तक होते हैं।

उपरोक्त तीन प्रकार के खाद्य पदार्थों—कार्बोहाइड्रेट, चर्बी और प्रोटीन—के अलावा शरीर को कुछ खनिजों की भी आवश्यकता होती है। खनिजों के कारण शरीर के अंग सुचारु रूप से काम करते हैं, खून का दौरा ठीक से होता है और हड्डियाँ तथा दाँत मज़बूत बनते हैं। इन खनिज़ों से आपको कैल्शियम, फ़ास्फ़ोरस और लोहा जैसे तत्व प्राप्त होते हैं। अच्छे स्वास्थ्य के लिए आपके भोजन में खनिज़ भी समुचित मात्रा में मौजूद रहने चाहिएं।

कैल्शियम और फ़ास्फ़ोरस की ज़रूरत हड्डियों और दांतों के लिए ख़ास तौर पर होती है और ये दोनों दूध और पनीर में प्राप्त हो सकते हैं। फ़ास्फ़ोरस का उपयोग मांसपेशियों, नाड़ियों और मस्तिष्क को बनाने में होता है। लोहा हर प्रकार की जीव-कोशिकाओं

में मौजूद रहता है। लोहे के लिए सबसे अच्छा खाद्य पदार्थ जिगर है। घोंघों, गोश्त, मटर, सेम, अंडों और मछली में भी यह पाया जाता है। लोहे का एक बड़ा महत्वपूर्ण यौगिक, जिसका नाम **हीमोग्लोबिन** है, लाल रक्त कणों में होता है। इसका काम फेफड़ों से ऑक्सीजन शरीर के विभिन्न अंगों में ले जाना है।

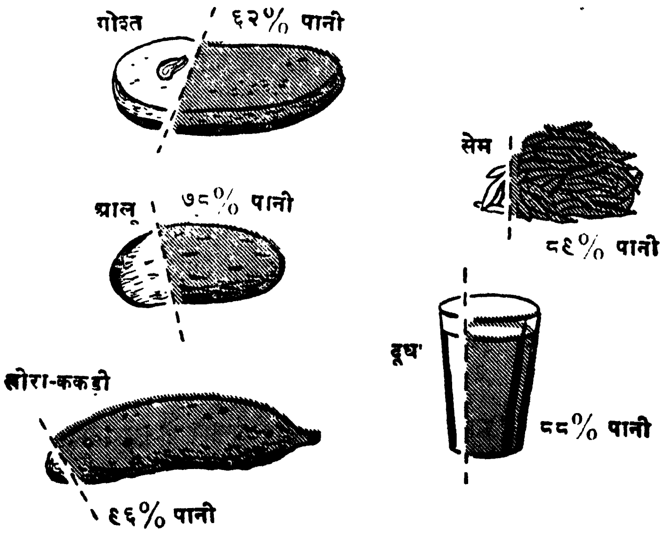
साधारण नमक (सोडियम क्लोराइड) रक्त और शरीर के अन्य द्रवों में हमेशा मौजूद रहता है। इसका कुछ हिस्सा पेट में **नमक के तेज़ाब** में बदल जाता है जिसकी ज़रूरत पाचन क्रिया में होती है। शरीर की वृद्धि और उसके कामों को ठीक प्रकार से चलाने के लिए भोजन के साथ थोड़ी आयोडीन लेना भी आवश्यक है। समुद्र से मिलने वाले भोजनों में आयोडीन काफ़ी मात्रा में मिलती है, लेकिन उचित मात्रा में आयोडीन प्राप्त करने के लिए खाने के साथ ऐसा नमक खाया जाता है जिसमें सोडियम क्लोराइड के साथ थोड़ा सोडियम आयोडाइड भी मिला होता है।

भोजन-रसायन के बारे में बातें करते समय एक बड़ी आवश्यक वस्तु पानी को नहीं भूलना चाहिए। यद्यपि यह न तो हमें शक्ति देता है और न शरीर की कोशिकाओं को बनाता है फिर भी यह बहुत ज़रूरी पदार्थ है। दूसरे पदार्थ इसी में घुलकर शरीर के सभी अंगों में पहुंचते हैं और इसकी मदद से बेकाम पदार्थ शरीर से बाहर निकलते हैं।

तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि अनेक प्रकार के खाद्य पदार्थों में अधिक अंश पानी का ही होता है। कच्चे गोश्त का आधे से ज़्यादा अंश पानी है और कुछ फलों तथा सब्ज़ियों में तो ९५ प्रतिशत पानी होता है। हमारे शरीर के विकास के लिए आवश्यक सभी वस्तुएं दूध में होती हैं इसीलिए उसे **आदर्श खाद्य** कहा जाता है। इसका

९/१० भाग पानी होता है। तुम्हारे शरीर के वज़न का दो-तिहाई हिस्सा पानी है। अब तुम्हारी समझ में आ गया होगा कि रोज़ तरल पदार्थ ज़्यादा मात्रा में पीना क्यों आवश्यक है।

क्या ऐसा भी हो सकता है कि ज़्यादा खाना खाकर भी कोई व्यक्ति भूखा रहे ? हो सकता है कि आवश्यक कैलारियां प्राप्त करने भर का खाना आप खा लेते हैं लेकिन फिर भी कुछ आवश्यक पदार्थ आपको मिल न पाते हों। लगभग पचास साल पहले वैज्ञानिकों को अभ्यास होने लगा था कि भोजन में थोड़ी मात्रा में ऐसी भी चीज़ें होती हैं जो अच्छे स्वास्थ्य के लिए बहुत ज़रूरी हैं। इनको **विटामिन** कहा जाता है और अंगरेज़ी वर्णमाला के अक्षरों के आधार पर इनके नाम रख लिये गये हैं।



कुछ खाद्य पदार्थों में पानी का अंश बहुत अधिक होता है।

पुराने ज़माने में जब छोटे-छोटे जहाज़ पालों से चलाये जाते थे, लम्बी यात्रा करने वाले नाविकों को 'स्कर्वी' नामक एक ख़तरनाक रोग हो जाया करता था। अभी २०० वर्ष पहले अंगरेज़ी जलसेना के एक डॉक्टर ने पता लगाया था कि सिर्फ़ ताज़े फल और तर-कारियां खाकर ही यह बीमारी ठीक हो सकती है। तभी पहली बार लोगों ने जाना कि भोजन में **किसी चीज़ की कमी** की वजह से कोई विशेष बीमारी हो सकती है।

इस बीमारी को रोकने वाला पदार्थ आजकल **विटामिन-सी** कहलाता है। रसायनज्ञों ने इसका सूत्र $C_6H_8O_6$ मालूम कर लिया है और अब यह काफ़ी मात्रा में उत्पादित किया जा सकता और दूसरे भोजनों में जोड़ा जा सकता है। संतरा, नीबू, करमकल्ला, मूली और टमाटर कुछ ऐसे स्वाभाविक खाद्यपदार्थ हैं जिनमें विटा-मिन-सी अधिक मात्रा में मौजूद रहता है। और सभी विटामिनों की तरह यह विटामिन भी ज़्यादा समय तक शरीर के भीतर ठहर नहीं सकता, इसीलिए हर समय इसे खाते रहना ज़रूरी है। अब आपकी



ऐसे खाद्य पदार्थों में विटामिन बी-१ की मात्रा ज्यादा पाई जाती है।

समझ में आ गया होगा कि नाश्ते के साथ एक गिलास संतरे का रस पीना या आधा अनार खाना क्यों आवश्यक है।

एक और विटामिन का पता जावा में लगा। एक हालैंड निवासी डॉक्टर ईकमैन वहां रहते थे। जावा के हज़ारों निवासी एक भयानक बीमारी 'बेरीबेरी' के शिकार हो जाया करते थे। यह बीमारी कभी-कभी उन्हें अपंग बना दिया करती थी। डॉक्टर ईकमैन उनके भोजन का निरीक्षण करने लगे कि शायद उसी में उनकी बीमारी का उत्तर मौजूद हो। वे जानते थे कि अधिकांश जावा निवासी भूसी



ऐसे खाद्य पदार्थों में विटामिन बी-२ की मात्रा ज्यादा पाई जाती है।

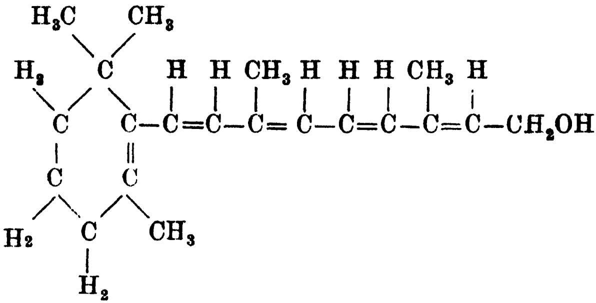
अलग किया हुआ चावल खाते हैं। उन्होंने एक प्रयोग किया। उन्होंने कुछ पूरी तरह स्वस्थ मुर्गियों को यही चावल खिलाया। परिणाम यह हुआ कि कुछ समय पहले जो मुर्गियां तन्दुरुस्त-चुस्त थीं, अब 'बेरीबेरी' की शिकार होकर कमज़ोर हो गईं।

डॉक्टर ने अपना प्रयोग जारी रखा। उन्होंने मुर्गियों को कुछ दिनों तक सिर्फ़ चावल की भूसी खिलाई। थोड़े समय में वे फिर मोटी-ताज़ी और तन्दुरुस्त हो गईं। डॉक्टर ईकमैन यह तो नहीं जान सके कि चावल की भूसी में कौन-सा जादुई पदार्थ था। लेकिन कम से

कम 'बेरीबेरी' का रहस्य तो वे समझ ही गये थे। उन्होंने सरकार से प्रार्थना की कि जावा के रहने वालों को चावल खाने से रोका जाय। कुछ समय में यह भयानक बीमारी काबू में आ गई।

थोड़े ही वक्त के भीतर संसार के सभी देशों के वैज्ञानिक दूसरे विटामिनों की बनावट मालूम करने और उन्हें बनाने की कोशिश करने लगे। डॉ० ईकमैन ने 'बेरीबेरी' की जो दवा निकाली थी उसी यौगिक का आधुनिक रासायनिक नाम **विटामिन बी-१** है। इसका सूत्र $C_{12} H_{18} N_4Cl_2OS$ है। इसका दूसरा नाम **थायमिन हाइड्रोक्लोराइड है**। चावल की लगभग १०० **टन** भूसी से १ **औंस** विटामिन बी-१ निकलता है। यह सौभाग्य ही है कि हमें इन विटामिन में से प्रत्येक की बहुत ही कम मात्रा में ज़रूरत पड़ती है—१ औंस का करीब-करीब दस हज़ारवाँ भाग। अगर आप काफ़ी अनाज, मटर, सेम, अंडे और टमाटर खाओ तो विटामिन बी-१ की काफ़ी मात्रा आपके शरीर में पहुंच जायगी। इससे आपकी नाड़ियां अच्छी हालत में रहती हैं, भूख और पाचनशक्ति दोनों बढ़ती हैं।

एक और विटामिन, जो आपके शरीर की वृद्धि करता है, आपको मज़बूत और चुस्त बनाये रखता है और आंखों की कुछ बीमारियों से आपकी रक्षा करता है—**विटामिन ए** कहलाता है। यह दूध, मक्खन, अंडों, हरी तरकारियों, अनाज और गाजर में यह पाया जाता है। इसकी बनावट काफ़ी जटिल होती है यह इसके आकारसूत्र से स्पष्ट हो जायगा :



विटामन डी को कभी-कभी धूप में पैदा होने वाला विटामिन कहा जाता है। कारण यह है कि वह आपके शरीर की खाल में सूर्य के प्रभाव से ही बनता रहता है। इस यौगिक से हड्डियों और दांतों में कैल्शियम तथा दूसरे खनिज बनते हैं। हड्डियों को अगर ठीक से खनिज नहीं मिल पाते तो वे मुलायम पड़ जाती हैं और खासकर बच्चों को हड्डियां मुलायम पड़ने की ज़्यादा बीमारी हो जाती है। साधारण भोजन में यह विटामिन नहीं होता, इसलिए आवश्यक है कि आप ज़्यादा से ज़्यादा धूप का सेवन करें। कभी-कभी 'डेयरी' से आने वाली दूध की बोतलों पर लिखा होता है—'प्रकाशोत्पन्न



ऐसे खाद्य पदार्थों में विटामिन सी की मात्रा ज्यादा पाई जाती है।

विटामिन डी'। इसका मतलब यह होता है कि बोतलों में भरे जाने से पहले दूध शक्तिशाली बल्बों की रोशनी में रखा गया था जिससे उसमें विटामिन-डी पैदा हो जाय।

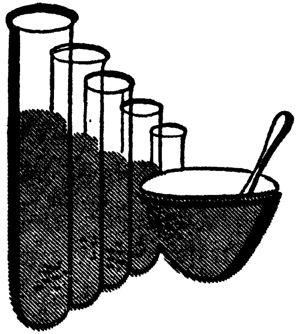
'कॉड' और 'हैलीबट' नामक मछलियों के जिगर में विटामिन ए और विटामिन डी काफ़ी मात्रा में होते हैं। डाक्टर लोग कभी-कभी बच्चों को मछलियों के जिगर का तेल पिलाते हैं जिससे उन्हें ये विटामिन काफ़ी मात्रा में मिल सकें।

विटामिनों का अध्ययन आसान नहीं है। जीव-रसायनज्ञ उनके बारे में हमेशा नई-नई बातें पता लगाने में लगे रहते हैं। कई और विटामिन भी हमें मालूम हैं। उनमें से एक के बारे में बताना यहां पर ज़रूरी है। यह है **विटामिन बी-२** जिसे **रिबोफ्लैविन** भी कहा जाता है। यह त्वचा, आंखों और बालों को स्वस्थ रखता है तथा गोश्त, दूध और अंडों में काफ़ी मात्रा में पाया जाता है। डिब्बों में बन्द जो खाद्य पदार्थ आते हैं उनमें से अनेक पर लिखा रहता है: 'थायमिन और रिबोफ्लैविन के साथ'।

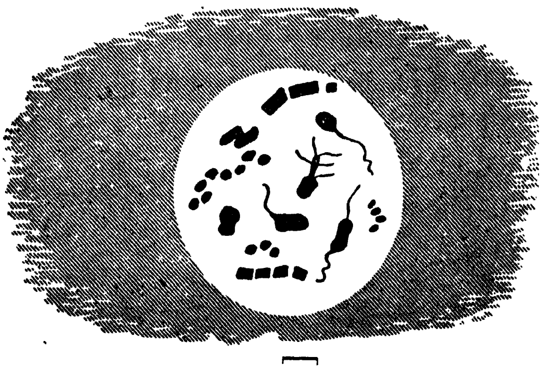
यह सही है कि सभी प्रमुख विटामिन हमें गोलियों के रूप में दवाओं की दूकानों में मिल सकते हैं, लेकिन उन्हें पाने का सबसे अच्छा, सुरक्षित और सस्ता रास्ता समुचित भोजन करना ही है। और फिर, गोलियां खाने से कहीं ज्यादा मज़ा क्या तरह-तरह की चीज़ें खाने में नहीं आता?

६

बीमारियां दूर करने वाले रसायन



कीटाणु बीमारियां फैला सकते हैं, इसलिए ज़रूरी है कि इन सूक्ष्म जन्तुओं को हम अपने शरीर में प्रवेश करने से बचाते रहें, जो भोजन, सांस लेने वाली हवा, या खाल पर लगी खरोंचों से शरीर में घुस जाते हैं। अधिकतर कीटाणु तो वास्तव में बहुत छोटे-छोटे पौधे हैं जिन्हें **बैक्टीरिया** कहा जाता है। साधारण पौधों की तरह वे हरे नहीं होते और कुछ तो इतने छोटे होते हैं कि सबसे ज़्यादा शक्तिशाली सूक्ष्मदर्शकों से भी नहीं देखे जा सकते।



१/१०,००० इंच

सूक्ष्मदर्शक से आप अनेक तरह के कीटाणुओं को देख सकते हैं।

सभी बैक्टीरिया हानिकारक नहीं होते। असलियत तो यह है कि कुछ दूसरी तरह के बैक्टीरिया के बिना हमारा जीवन ही दूभर हो जाता। कुछ बैक्टीरिया पौधों को उगने में, कुछ मृत पौधों या जानवरों को सड़ाकर नष्ट कर देने में और कुछ मिट्टी में रहकर अच्छी से अच्छी फ़सल पैदा करने में मदद करते हैं। गाय की आंत में एक प्रकार के बैक्टीरिया होते हैं जो उसे घास पचाने में सहायक होते हैं। **यीस्ट** बैक्टीरिया की ही तरह के कुछ बड़े पौधों से बनता है और चीनी को अलकोहल में बदल सकने वाले रसायन का निर्माण करता है। सच तो यह है कि सभी बैक्टीरिया रासायनिक परिवर्तनों के ज़रिये अपना काम निकालते हैं और इसी वजह से जीव रसायनज्ञों को उनमें दिलचस्पी है।

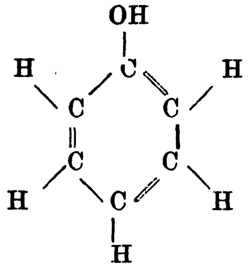
सौ वर्ष से भी कम समय पहले तक लोग यह नहीं जानते थे कि बीमारियां कीटाणुओं के कारण होती हैं, लेकिन आज इस तथ्य पर भी सहसा विश्वास नहीं हो सकता। सौ वर्ष हुए एक फ्रांसीसी रसायनज्ञ लुई पास्च्युर ने पता लगाया कि बैक्टीरिया हर जगह होते हैं और कुछ विशेष प्रकार के बैक्टीरिया पौधों या जानवरों के शरीर में प्रवेश करके स्वयं बढ़कर बीमारियां पैदा करते हैं।

इंगलैंड में, जोज़ेफ़ लिस्टर नामक एक सर्जन ने सोचा कि हो सकता है आपरेशनों के बाद घाव सड़ने या मौत होने का कारण बैक्टीरिया ही हों। उन दिनों अस्पतालों में छोटे से छोटे आपरेशनों में भी खून में ज़हर फैलने का डर बना रहता था। डाक्टर लोग वही गन्दे कपड़े आपरेशन करते समय भी पहने रहते थे और काम ख़त्म करके औज़ारों को सिर्फ़ पानी से धो लिया करते थे। लिस्टर ने आपरेशन के कमरों में **कार्बोलिक अम्ल** का छिड़काव किया और सर्जनों के हाथों, औज़ारों और पट्टियों को भी कार्बोलिक अम्ल के

घोल से धोया जाने लगा। परिणामस्वरूप खून में ज़हर फैलने की घटनाएं फ़ौरन कम हो गईं। लिस्टर ने इस तरह **कीटाणुनाशकों** का आविष्कार तो किया ही, साथ ही पास्च्युर के उस कथन को भी सिद्ध कर दिया कि कीटाणु बीमारियां फैलाते हैं।

तब से रसायनज्ञहम सभी के उपयोग के लिए आयोडीन, अल्कोहल, फॉर्मेलिन, मरक्यूरोक्रोम तथा अन्य अच्छे कीटाणुनाशकों का निर्माण कर चुके हैं। आजकल घावों का सड़ना नहीं के बराबर हो गया है और अगर कोई घाव सड़ने भी लगे तो उसे फौरन नई, शक्तिशाली दवाइयों से रोका जा सकता है।

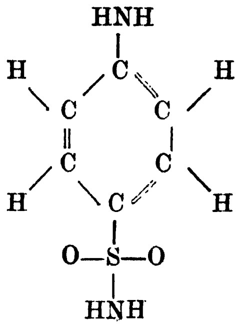
लिस्टर और दूसरे वैज्ञानिक अब सोचने लगे कि क्या रासायनिक पदार्थों का उपयोग आदमी के शरीर के भीतर और बाहर के कीटाणुओं को मारने में किया जा सकता है? अधिकतर डॉक्टरों का विचार था कि यह संभव नहीं है, लेकिन एक जर्मन रसायनज्ञ पॉल अरलिक ने दूसरों की असफलताओं से निराश होने से इनकार कर दिया। उन्होंने आर्सेनिक के एक कीटाणुनाशक से अपना काम शुरू किया और इसके अणु को बार-बार बदलना शुरू किया। आश्चर्य कि ये यौगिक रंग भी होते हैं। ये चिपचिपे तारकोल से बनाये जाते हैं जो स्वयं कच्चे कोयले को गर्म करके कोक बनाते समय तैयार किया जाता है।



कार्बोलिक अम्ल का अणु

छः सौ से ज़्यादा बार असफल होने के बाद डॉक्टर अरलिक आखिरकार एक ऐसी दवा बनाने में सफल हो ही गये जो बिना मरीज़ को नुकसान पहुंचाये बैक्टीरिया का विनाश कर सकती थी। इस तरह उन्होंने औषधि विज्ञान के इतिहास में एक महान् आविष्कार तो किया ही, इस तरह के इलाज को एक नया नाम भी दिया। वह नाम है **रसायन औषधि विज्ञान** जिसका अर्थ है 'रसायनों द्वारा चिकित्सा करना'।

डॉक्टर अरलिक के आविष्कार से पहले डॉक्टरों का विश्वास था कि मानवता की सहायक औषधियां सिर्फ़ पौधों से प्राप्त की जा सकती हैं लेकिन अब वे अन्य खनिज दवाइयों, विशेषत: कोलतार से बने रंगों से निकलने वाली दवाइयों, की खोज करने लगे। **सल्फ़ा** परिवार के रसायन अब से करीब बीस साल पहले मालूम हुए और यह भी पता लगा कि ये रसायन निमोनिया, रक्तविकार व कानों और गले के रोगों में लाभदायक हो सकते हैं। **सल्फ़ानिलामाइड** और **सल्फ़ाथियाज़ोल** ऐसी ही दो दवाइयां हैं जिनके नाम शायद आपने सुने होंगे। कुछ सल्फ़ा दवाइयां गोलियों के रूप में खाई जाती हैं जब कि दूसरी दवाइयां चोट लगने या जलने पर मरहम की तरह लगाई जाती हैं।



सल्फ़ानिलामाइड का अणु

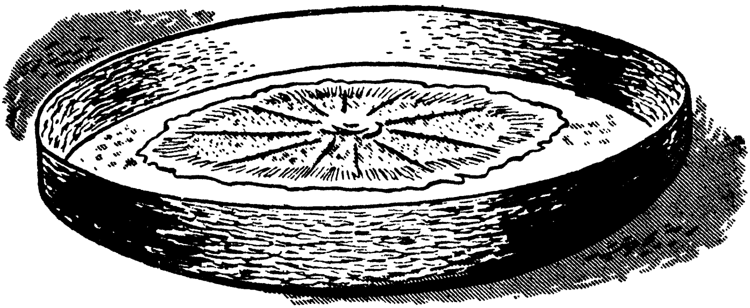
सल्फ़ा दवाइयां तश्तरी पर उगे हुए बैक्टीरिया को नहीं मार सकतीं लेकिन शरीर के भीतर या बाहर कीटाणुओं का बढ़ना फौरन रोक सकती हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार इसका कारण सल्फ़ा दवाइयों में कीटाणुओं के बाहरी भागों को नरम कर देने की ताक़त है। और इस प्रकार वे हमारे खून की कोशिकाओं और रसायनों को उन पर हमला करके उन्हें मार डालने का अवसर देती हैं।

कुछ महत्वपूर्ण दवाओं के बारे में एक अचरज की बात यह है कि वे बड़े ही अजीब-अजीब पदार्थों से प्राप्त होती हैं। आप देख ही चुके हैं कि चिपचिपे, गन्दे कोलतार से जीवन रक्षक सल्फ़ा दवाइयां निकलती हैं और कई विटामिन चावल की भूसी और मछलियों के जिगर से निकलते हैं। और अब यह भी जान लीजिये कि कुछ महत्वपूर्ण कीटाणुनाशक सूखी रोटी या पनीर के ऊपर लग जाने वाली पीली या हरी फुई से मिलते हैं।

यह मालूम हुआ एक अंगरेज़ वैज्ञानिक डॉक्टर ऐलेक्ज़ेंडर फ्लेमिंग की एक आकस्मिक खोज के फलस्वरूप। अब तक आप इतना तो समझ ही गये होंगे कि ऐसी 'आकस्मिक घटनाएं' केवल उन्हीं

लोगों के साथ होती हैं जो उनका महत्व समझते हैं और अपने 'सौभाग्य' का लाभ उठाना जानते हैं।

एक दिन डॉक्टर फ्लेमिंग का सहायक एक तश्तरी लेकर उनके पास आया जिस पर कुछ ख़तरनाक कीटाणु पल रहे थे। (प्रयोगशाला में एक तश्तरी पर जिलेटीन की परत पर कुछ कीटाणु रखकर उन्हें उगने दिया जाता है और इस तरह उनकी एक फ़सल खड़ी हो जाती है।) "यह तश्तरी तो बेकार हो गयी," सहायक ने कहा, "क्योंकि इस पर फ़ुई लग गयी है। अब इसे फेंक देना पड़ेगा।"



डाक्टर फ्लेमिंग का परीक्षण

डॉक्टर फ्लेमिंग उसकी बात मानने को तैयार थे। तब उन्होंने दुबारा तश्तरी को देखा और वे उछल पड़े। "देखो तो!" उन्होंने कहा, "फुई के चारों ओर के कीटाणु नष्ट हो गये हैं। जिस चीज़ ने उन्हें मार डाला है वह ज़रूर ही इसी फुई से पैदा हुई होगी।"

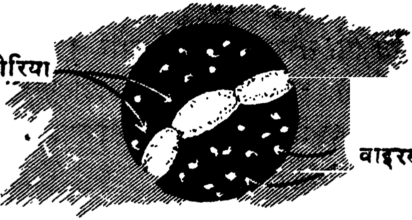
अभी भी काफ़ी काम बाकी था। तश्तरी पर पड़ गई फुई की ही तरह के दूसरे फुइयों से कई प्रकार के कीटाणुओं पर प्रयोग किये गये। अनेक दूसरे वैज्ञानिक भी इस काम में लग गये। आख़िरकार उन्होंने पता लगा ही लिया कि फुई में कीटाणुओं का विनाश करने

की ताक़त उसमें थोड़ी मात्रा में पैदा होने वाले एक रसायन के कारण होती है। इस हरे-नीले रंग की फुई का नाम पेनिसिलिन था, इसीलिए इस नई दवा को भी **पेनिसिलिन** का नाम दिया गया।

इस समय तक द्वितीय महायुद्ध शुरू हो गया था। सेनाओं को इस नये कीटाणुनाशक की बड़ी ज़रूरत थी। इंगलैंड में उतनी तेजी से बना पाना संभव नहीं था। फलतः कुछ फुई अमेरिका भेज दी गयी और वहां बड़ी मात्रा में पेनिसिलिन बनाने का एक तरीका मालूम कर लिया गया। आज पेनिसिलिन १५,००० गैलन समोने वाले इस्पाती पीपों में बनाई जाती है और हर दवाओं की दूकान या अस्पताल में हमेशा मौजूद रहती है। कीटाणुओं के विरुद्ध मोर्चा लेने के लिए पेनिसिलिन हमारे सबसे अच्छे हथियारों में से एक है। इसका नाम 'करामाती दवा' सचमुच ठीक ही है।

सल्फ़ा दवाइयों और पेनिसिलिन की आश्चर्यजनक सफलता ने वैज्ञानिकों को और ऐसी दवाएं खोज निकालने को प्रेरित किया जो दूसरी संहारक बीमारियों का इलाज कर सकें। एक बड़ी भयानक बीमारी है तपेदिक़। कुछ समय पहले तक अमेरिका में लगभग ५०,००० व्यक्ति हर साल इस बीमारी के शिकार होकर मरते थे। पिछले दस वर्षों में एक-तिहाई मौतें घट गई हैं। कारण यही है कि मिट्टी में कुछ नये कीटाणुओं का पता लग सका था।

इनमें से एक कारगर दवा का नाम **स्ट्रेप्टोमाइसिन** है। इसका आविष्कार १९४४ में एक अमेरिकी वैज्ञानिक डॉक्टर सेलमैन वैक्समैन ने १०,००० प्रयोग करने के बाद किया। उन्होंने पता लगाया कि यह यौगिक ऐसे कीटाणुओं का विनाश कर सकता है, जिन पर पेनिसिलिन का कोई प्रभाव नहीं होता। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इसका उपयोग थोड़ी सफलता के साथ तपेदिक़ का इलाज करने में भी हुआ है



१/१००,००० इंच

एलेक्ट्रोन सूक्ष्मदर्शक से बैक्टरिया और वाइरस कीटाणु देखे जा सकते हैं।

'वाइरस' परिवार के आश्चर्यजनक कीटाणु हमारे सबसे छोटे और ख़तरनाक दुश्मन हैं। उनका आकार १ इंच का करोड़वां भाग होता है और वे **इलेक्ट्रोन सूक्ष्मदर्शक** के बिना नहीं देखे जा सकते। वैज्ञानिक इतना तो जानते हैं कि 'वाइरस' शरीर के भीतर ही विकास कर सकते हैं लेकिन यह नहीं जानते कि वे पौधे हैं या जानवर।

अनेक प्रकार की बीमारियाँ, जैसे छोटी चेचक, इन्फ़्लुएंज़ा, पोलियो और ज़ुकाम, इन्हीं 'वाइरसों' के कारण होती हैं। दक्षिणी अमेरिका की मिट्टी में एक और वाइरस-नाशक **क्लोरोमाइसेटिन** का पता अभी कुछ ही बरस पहले लगा है। क्लोरोमाइसेटिन 'टाइफ़स' नामक एक भयानक बीमारी के 'वाइरस' को नष्ट कर सकता है और अब रासायनिक प्रयोगशालाओं में बड़ी मात्रा में बनाया जाता है। एक और नवीनतम कीटाणुनाशक **आयरोमाइसिन** मियादी बुखार और खूनी पेचिश को ठीक करने में काम आता है।

लगभग हर रोज़ हम नयी-नयी करामाती दवाओं के आविष्कार के बारे में सुनते है। वैज्ञानिकों को पूरी आशा है कि किसी न किसी दिन पोलियो को रोकने या अच्छा करने वाली दवा

अवश्य निकलेगी और कैंसर (नासूर) किसी दिन रसायनों से हार जायेगा। पेनिसिलिन, सलफ़ा दवाइयों और दूसरी करामाती दवाइयों के कारण निमोनिया, रक्तविकार, अपेंडिसाइटिस और दूसरी भयानक बीमारियों से होने वाली मौतें अब दस साल पहले होने वाली मौतों का एक अंश भर रह गई हैं।

आज हमारी तन्दुरुस्ती तो ज्यादा अच्छी रहती ही है, हमारी जीवन की अवधि भी बढ़ गई है। आपके बाबा जी के समय में पैदा होने वाले आदमी की औसत आयु सिर्फ़ उन्चास साल हुआ करती थी। आज यह औसत उम्र सड़सठ साल है और यह अन्तर आपके जन्म के बाद हुआ है। डॉक्टरों का कहना है कि जो काम पिछले चार हज़ार वर्षों की वैज्ञानिक प्रगति हमारे स्वास्थ्य के लिए नहीं कर सकी, उसे रसायन औषधि विज्ञान ने बीस बरसों में कर दिखाया है।

१०

खेती और रसायन शास्त्र



आपने कभी शायद इस ढंग से सोचा न होगा, लेकिन खेत वास्तव में एक तरह के रासायनिक कारखाने हैं और किसान एक प्रकार के रसायनज्ञ। कृषि कालेजों में वैज्ञानिक ढंग से खेती का अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों को रसायन शास्त्र का काफ़ी अध्ययन करना पड़ता है। लेकिन ऐसी शिक्षा के बिना भी हज़ारों बरसों के पीढ़ी दर पीढ़ी के अनुभवों से किसानों को काफ़ी रासायनिक तथ्य मालूम हो गये हैं।

हमारा भोजन पौधों पर निर्भर करता है क्योंकि चीनी और प्रोटीन जैसे कुछ आवश्यक रसायनों को बनाने का तरीक़ा उन्हें ही मालूम है (अध्याय ८ देखें)। हर जानवर अपने अस्तित्व के लिए पौधों पर आधारित है, चाहे वह पौधे खाये या पौधे खाने वाले जानवरों को।

संसार के निवासियों को भोजन प्रदान करने के लिए किसान को हमेशा प्रकृति की शक्तियों के विरुद्ध मोर्चा लेना पड़ता है। पाला, आंधी, सूखा, हानिकारक कीड़े-मकोड़े उसकी खेती नष्ट करने को हमेशा तैयार रहते हैं, और उनसे लड़कर वह आदमियों और जान-

वरों को खाना देता है। लेकिन भूख के विरुद्ध इस संग्राम में किसान अकेला नहीं होता। मिट्टी में रहने वाले असंख्य बैक्टीरिया उसके मित्र हैं। अभी आप समझ जायेंगे कि बैक्टीरिया की मदद के बिना किसान का काम कभी पूरा नहीं हो सकता।

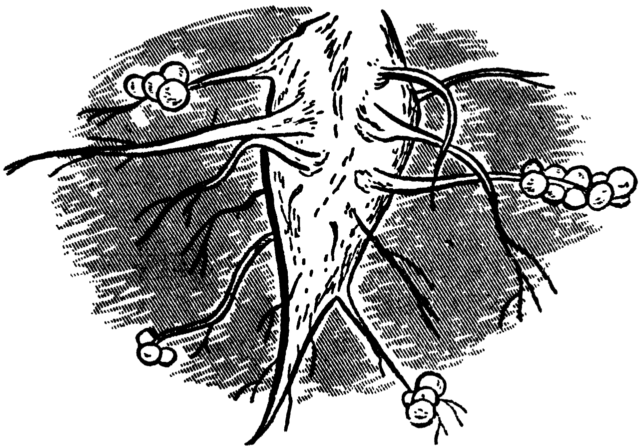
अनाज की फसलों या दूसरे पौधों को उखाड़ लेने के बाद यह ज़रूरी हो जाता है कि जिन रसायनों से वे बने हैं उन्हें फिर से मिट्टी में पहुंचाया जाय जिससे मिट्टी उपजाऊ बनी रहे। मिट्टी में खाद —जैसे सूखी मछली, हड्डियां, कूड़ा या कोई रासायनिक खाद—डालकर यह हो सकता है। अच्छी खाद के सबसे महत्वपूर्ण तत्व हैं नाइट्रोजन, फ़ास्फ़ोरस और पोटैशियम—और सभी नये पौधों को इनकी ज़रूरत होती है। फिर भी पौधों द्वारा उनके इस्तेमाल किये जाने से पहले बैक्टीरिया द्वारा उनका उपयोग ज़रूरी है। इन बैक्टीरिया को स्वयं जीवित रहने के लिए लोहा, तांबा, मैग्नीशियम और गन्धक की जरूरत होती है। यानी किसान जब खेत में खाद डालता है, तो अपनी फ़सल को खाना तो देता ही है, अपने मित्र बैक्टीरिया को भी भोजन देता है।

दूसरे काम करने वालों की तरह ही बैक्टीरिया भी कुछ विशेष कामों को करने में सिद्धहस्त होते हैं। कुछ प्रोटीन, चीनी और मांड को तोड़ सकते हैं तो कुछ सेल्यूलोज़ और चर्बी पर पर असर करते हैं। इन पदार्थों को पचाने के बाद मिट्टी के बैक्टीरिया हाइड्रोजन, मीथेन, कार्बन डाईऑक्साइड और अमोनिया जैसी चीजें पैदा करते हैं। मिट्टी नामक विशाल रासायनिक कारखाने में कुछ बैक्टीरिया का काम रसायनों को ऑक्सीकरित करना होता है। तब दूसरे बैक्टीरिया काम को सम्हाल लेते हैं और पदार्थों को और आगे बदलते हैं।

आठवें अध्याय में बताया गया था कि हमारे शरीर की कोशिकाएं

प्रोटीन से बनती हैं, इस कारण हमारे भोजन में उनका होना आवश्यक है। प्रोटीन बनाने के लिए एक आवश्यक तत्व है नाइट्रोजन। लेकिन पौधे और जानवर इस काम के लिए नाइट्रोजन सीधे हवा से नहीं ले सकते। नाइट्रोजन यौगिकों से ही वे अपने लिए आवश्यक प्रोटीन बना सकते हैं।

मिट्टी में उपस्थित एक विशेष प्रकार का बैक्टीरिया हवा से सीधे नाइट्रोजन ले सकने में **समर्थ** होता है और उसे **स्थिर** भी कर सकता है यानी दूसरे तत्वों से सम्मिलित करा सकता है। नाइट्रोजन स्थिर कर सकने वाले बैक्टीरिया की कुछ किस्में मटर, सेम, 'क्लोवर' और 'अलफ़ाफ़ा' जैसे हरे पौधों की जड़ों पर चिपक कर उनके साथ काम करते हैं। पौधा तब बैक्टीरिया के चारों ओर जड़ के पदार्थ से अंगूरनुमा गुच्छे तैयार कर देता है और उसके जीवन के लिए आवश्यक चीनी उसे देता है। बदले में बैक्टीरिया हवा या मिट्टी से



कुछ पौधे अपनी जड़ों में अंगूर के समान गुच्छे तैयार करते हैं।

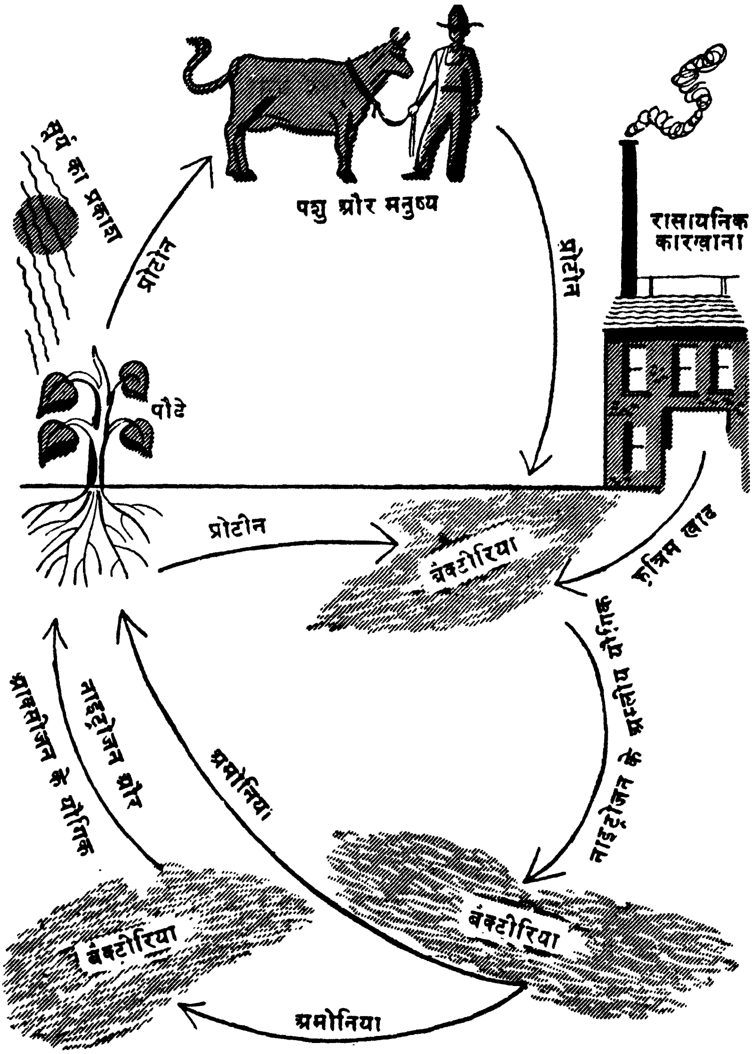
नाइट्रोजन गैस ले लेता है और पौधे के जीवन के लिए आवश्यक कुछ प्रोटीन उसकी कोशिकाओं में ही तैयार हो जाती है। कहने का मतलब यह है कि बैक्टीरिया और पौधों की यह दोस्ती पौधों का भी जीवन बनाये रखती है और पशुओं का भी।

'क्लोवर' और 'अल्फ़ाफ़ा' की फसलें बिना बार-बार बोये होती चली जाती हैं। अगर हल चलाकर इन्हें मिट्टी में ही दफ़ना दिया जाय तो नाइट्रोजन यौगिक फिर मिट्टी में ही लौट जाते हैं। इससे बिना खाद डाले मिट्टी इतनी अच्छी हो जाती है कि उस पर दूसरी फ़सलें उग सकें। इसी कारण किसान फ़सलों का **फेरा** किया करते हैं। एक साल वह अपने खेत में 'क्लोवर' बो देता है और उग आने पर हल चलाकर उसे मिट्टी में दबा देता है। अगले साल वह अनाज—जई, जौ, मटर कुछ भी बो देता है। और यही चक्र चलता रहता है।

रसायनज्ञों ने बैक्टीरिया की मदद के बिना नाइट्रोजन को स्थिर करने के तरीक़े मालूम कर लिये हैं। लगभग सभी कृत्रिम खादें नाइट्रोजन और हाइड्रोजन गैसों को सीधे मिलाकर अमोनिया बनाकर तैयार की जाती हैं। यह काम पहली बार जर्मन रसायनज्ञों ने प्रथम विश्व युद्ध से पहले किया था। दुर्भाग्यवश इस खोज ने पौधों का भोजन बनाना तो सिखाया ही, युद्ध के लिए विस्फोटकों का बनाना भी सिखा दिया।

पौधों, जानवरों और बैक्टीरिया में होने वाली जटिल रासायनिक क्रियाएँ वास्तव में **'नाइट्रोजन चक्र'** नामक एक विशाल क्रिया-चक्र का हिस्सा हैं। चित्र की मदद से आप इस चक्र को समझ सकेंगे।

पौधों की पत्तियों में हरे रंग का एक बड़ा जटिल पदार्थ होता है, जिसका नाम है **क्लोरोफ़िल**। सूर्य-किरणों की शक्ति खींचकर



पौधों, जानवरों और जीवाणुओं में होने वाली जटिल रासायनिक क्रियाएं 'नाइट्रोजन चक्र' का एक हिस्सा हैं।

वह किसी तरह से पौधों को इस योग्य बना देता है कि वे मिट्टी से पानी और हवा से कार्बन डाई ऑक्साइड लेकर मांड, चीनी और पौधों के अन्य भोजन बना सकें। भोजन तैयार करने की यह क्रिया **'फ़ोटोसिन्थेसिस'** कहलाती है। पौधे तब इन पदार्थों से प्रोटीन और चरबी बना लेते हैं। जानवरों द्वारा अपना भोजन खाने और पचाने के बाद प्रोटीन का गन्दा पदार्थ बच जाता है जो मिट्टी को वापस लौटा दिया जाता है। जैसा चित्र में दिखाया गया है, कृत्रिम खादें भी काम में लाई जा सकती हैं।

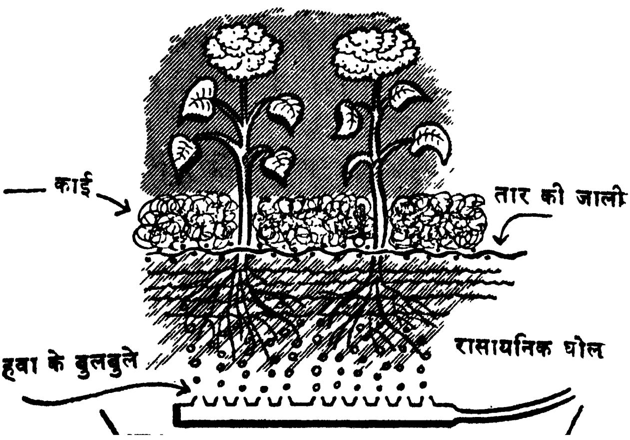
मिट्टी में वापस पहुंचने के बाद प्रोटीनों पर बैक्टीरिया अपना प्रभाव डालते हैं और उन्हें अम्लीय नाइट्रोजन यौगिक में बदल देते हैं। तब दूसरे बैक्टीरिया उन्हें अमोनिया में बदल देते हैं। कुछ अमोनिया का उपयोग तो पौधों द्वारा सीधे ही कर लिया जाता है और शेष भाग पौधों की जड़ों द्वारा शोषित होने से पहले दूसरे प्रकार के बैक्टीरिया द्वारा नाइट्रोजन और ऑक्सीजन के यौगिकों में बदल दिया जाता है। तब फ़ोटोसिन्थेसिस होती है और चक्र फिर शुरू हो जाता है। यानी साबित यह होता है कि कार्बनिक यौगिकों के सड़ने की गन्दी क्रियाओं की ही वजह से पृथ्वी पर जीवन की उपस्थिति सम्भव है।

खेती यद्यपि संसार का सबसे पुराना धंधा है फिर भी हमेशा नये-नये तरीक़े ईजाद किये जाते हैं। लम्बे अनुभव से किसान जानते हैं कि कृत्रिम खादें सड़े पौधों या दूसरी प्राकृतिक खादों से किसी भी हालत में अच्छी नहीं हैं। लेकिन क्यों ऐसा है, ऐसा जानने के लिए रसायनज्ञों की ही मदद लेनी पड़ी। प्राकृतिक खादों में थोड़ी मात्रा में कार्बनिक यौगिक, **पौधों के शुक्रकीट** कहा जाता है, मौजूद रहते हैं। पौधों के लिए वे उसी तरह उपयोगी होते हैं, जैसे विटामिन

हमारे लिए। रसायनज्ञ अब इन पदार्थों के बारे में ज़्यादा मालूम कर रहे हैं और मिट्टी में उपयोग के लिए बना भी रहे हैं।

पिछले कुछ बरसों में हुई खोजों के फलस्वरूप मिट्टी के बिना पौधे उगाने की मनोरंजक विधि निकल आई है। यह विधि **'हाइड्रोपोनिक्स'** कहलाती है। इसके एक तरीक़े में पौधों की जड़ें ऐसे कुंड में रखी जाती हैं, जिसमें उनके लिए आवश्यक रसायन मौजूद रहते हैं और जड़ों तक ऑक्सीजन पहुंचाने के लिए उसमें हवा प्रवाहित की जाती है। इस विधि में इतनी सावधानी की जरूरत पड़ती है कि अन्न उगाने के लिए यह मिट्टी में उगने वाली फ़सलों का स्थान कभी नहीं ले सकती। लेकिन कुछ तरकारियों और फ़लों के लिए यह विधि बड़ी अच्छी है।

पिछले कुछ बरसों में हुए विकास में से एक प्रमुख है **स्वाइल कंडीशनर'** (**मिट्टी स्थिति-नियन्त्रक**) की खोज। इनका एक उदाहरण



पौधे मिट्टी का सहारा लिये बिना ही तैयार किये जाते हैं।

है **क्रीलियम**। ये खादें नहीं हैं—इनका काम मिट्टी को सिर्फ़ **स-रंध्र** बना देना है। मिट्टी ज़्यादा पानी सोखकर बिलकुल ठोस हो जाती है और उसके भीतर स्थित नाइट्रोजन यौगिक तैयार करने वाले बैक्टीरिया तक हवा हो नहीं पहुंच पाती। कंडीशनरों की मदद से मिट्टी अलग-अलग दानों में बंट जाती है और हवा उनके बीच की जगह में पहुंच जाती है। इस तरह मिट्टी को 'तोड़ने' का एक फ़ायदा एक यह भी होता है कि पौधों की जड़ें आसानी से नीचे फैलती जाती हैं और अंकुर ऊपर बढ़ता जाता है। फलतः पौधे जल्दी उगते हैं और उनका आकार बड़ा होता है। इसी कातरण तरकारी की खेती करने वाले किसानों में इनका उपयोग बढ़ता जा रहा है।

अपने भोजन का ध्यान कर ही हम खेतों के बारे में सोचते हैं, लेकिन असल में खेतों की कुछ पैदावार हमारे सामने कभी आती ही नहीं, वह सीधे कारखानों में चली जाती हैं जहां उससे अनेक अन्य वस्तुएं बनाई जाती हैं। प्रायोगिक रसायनशास्त्र की एक शाखा **केमर्जी** में खेती की पैदावार के औद्योगिक उपयोग का अध्ययन किया जाता है। इस विज्ञान से हर साल करोडों टन खेती की अनुपयोगी पैदावार से मूल्यवान वस्तुएं बनाई जाती हैं।

केमर्जी हमें अनेक प्रकार की वस्तुएं देती है। अनाज के डंठलों से आवाज़ को पार न जाने देने वाली दीवारें बनाई जाती हैं। आलू और अनाज को बैक्टीरिया और यीस्ट से प्रभावित करके अल्कोहल बनाई जाती है जिसके अनेक महत्वपूर्ण औद्योगिक उपयोग हैं। दूध, सोयाबीन, लकड़ी की लुगदी और जानवरों के मल पदार्थ से अनेक प्रकार की आकर्षक प्लास्टिक बनाई जाती है जिसके सैकडों उपयोगों के बारे में आप अगले अध्ययन में पढ़ेंगे। 'पीनट' के तेल से रसायनज्ञ औलियोमार्गेरीन, साबुन और विस्फोटक बनाते हैं। यहां तक कि

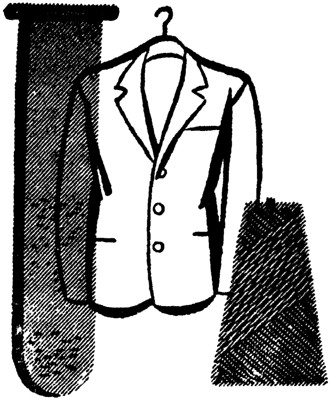
पीनट के छिलकों से लाइनोलियम और रेशों के तख्ते बनते हैं। दूसरे पीनट के पदार्थ हैं स्याही, रबर की जगह काम आने वाले पदार्थ, चेहरे पर मलने का पाउडर और रोग़न।

महान् कृषि-रसायनज्ञ जॉर्ज वाशिंगटन कार्वर पीनट और शकरकन्द के तीन सौ से अधिक उपयोगों का पता लगा सके थे। वे दक्षिण के नीग्रो गुलाम के लड़के थे लेकिन विज्ञान का अध्ययन करने के बाद वे आख़िरकार अमेरिका के अत्यन्त मेधावी शोध-रसायनज्ञ बने। उन्होंने किसानों को बताया कि वे किस तरह अपनी मिट्टी को सुधारकर अधिक प्रकार की फ़सलें उगा सकते हैं और ज़्यादा अच्छा खाना खा सकते हैं।

खेती की विधियों और उत्पादनों में रसायन शास्त्र के कारण बहुत विकास हुआ है। बदले में खेती ने भी रसायन उद्योगों को अनेक कच्चे माल दिये हैं। किसानों और रसायनज्ञों के इस साझे से दोनों का ही फ़ायदा हुआ है और निश्चय ही आगे भी होगा।

११

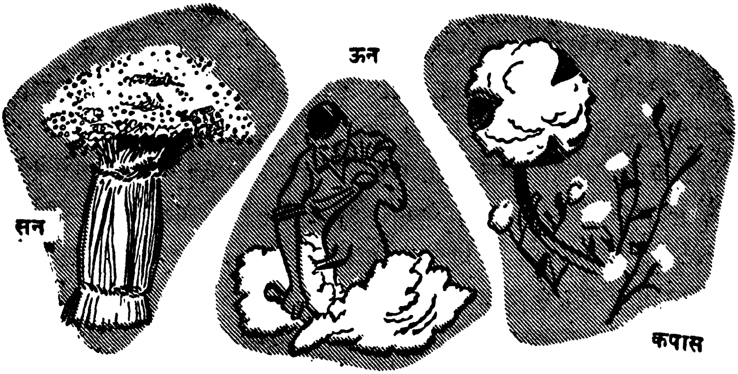
रेशे और प्लास्टिक



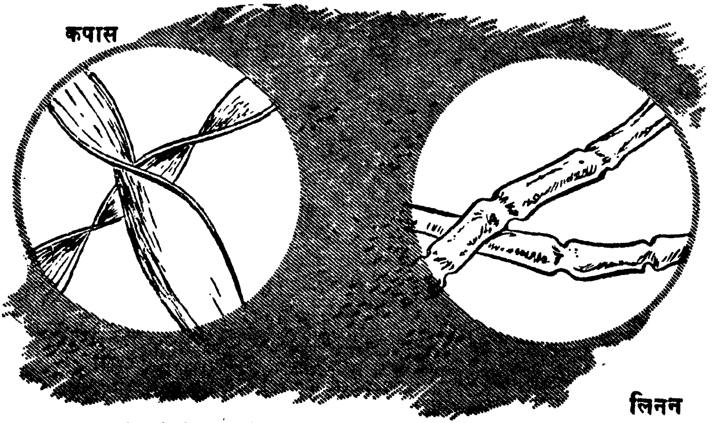
संसार के हर देश के निवासियों को अपना शरीर गर्म रखने या धूप और हवा से शरीर की रक्षा करने की ज़रूरत होती है। ज़माने पहले लोग जानवरों की खाल से कपड़े बनाया करते थे। बाद में वे बालों या रेशों को बटकर तागे बनाना भी सीख गये, जिनसे कपड़े बुने जा सकते थे।

ऊन या रेशम का उपयोग इस तरह हज़ारों बरसों से होता आ रहा है और लगभग इतने ही समय से रुई या पटसन जैसे पौधों के रेशों से कपड़ा भी बुना जा रहा है। भेड़ या कुछ दूसरे जानवरों के मुलायम बाल ही ऊन है जबकि रेशम 'कैटरपिलर' के कोये से निकाला जाता है।

कपड़ों का उपयोग हम पहनने के वस्त्र बनाने में तो करते ही है; कालीनें, सजावटी कपड़े, परदे, कम्बल, झण्डे, चटाइयां और दूसरी चीज़ें बनाने में भी करते हैं। आधुनिक कपड़ा उद्योग बहुत कुछ रसायन शास्त्र पर आधारित है। आज का रसायनज्ञ कपड़ों के रेशों की प्रकृति समझता है और जानता है कि उन्हें सैकड़ों-हज़ारों खूबसूरत रंगों में किस तरह रंगा जा सकता है।



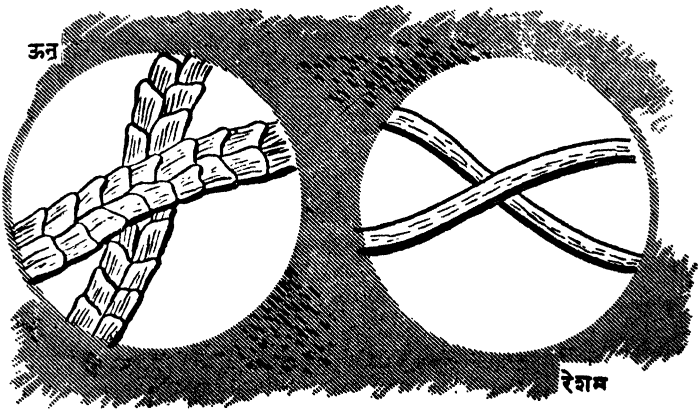
पिछले कुछ वर्षों में तो सूती वस्त्र-रसायनज्ञों ने कहीं ज़्यादा महत्त्व-र्णपू काम कर दिखाया है। वे कृत्रिम या संश्लिष्ट रेशे बनाना जान गये हैं, जो कुछ मानों में प्राकृतिक रेशों से भी अच्छे होते हैं। संश्लिष्ट के अर्थ हैं दूसरे पदार्थों को 'जोड़कर बनाया हुआ'। आज यह सही है कि हम खट्टे दूध, लकड़ी, हवा, प्राकृतिक गैस और



कपास और लिनेन के रेशे सूक्ष्मदर्शक द्वारा इस रूप में देखे जाते हैं।

कोयले जैसी चीज़ों के बने कपड़े पहनते हैं, जो पहले कभी सोचा ही नहीं जा सकता था। लेकिन नये रेशों के बारे में जानने से पहले यह ज़रूरी है कि आप पुराने और सुपरिचित रेशों के बारे में ज्यादा जानकारी प्राप्त कर लें।

सबसे पहला नाम है कपास का, क्योंकि यह किसी दूसरे रेशे से ज्यादा इस्तेमाल किया जाता है। हर साल लगभग तीन करोड़ गांठ रुई पैदा होती है, जिसका करीब-करीब आधा हिस्सा संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिणी राज्यों से आता है। रुई अधिकांश सेल्यूलोज़ है। सेल्यूलोज़ लकड़ी या पौधों की अन्य कोशिकाओं का मुख्य भाग होता है। यह एक कार्बोहाइड्रेट है, लेकिन रसायनज्ञ इसके अणुओं का निश्चित आकार नहीं जानते। इसका हर अणु शायद एक शृंखला में बंधे मांड के सैकड़ों अणुओं से बनता है। सूर्य की रोशनी की शक्ति का उपयोग करके पौधे कार्बन डाई ऑक्साइड को पानी के साथ मिलाकर **फ़ार्माल्डिहाइड** (CH_2O) नामक यौगिक



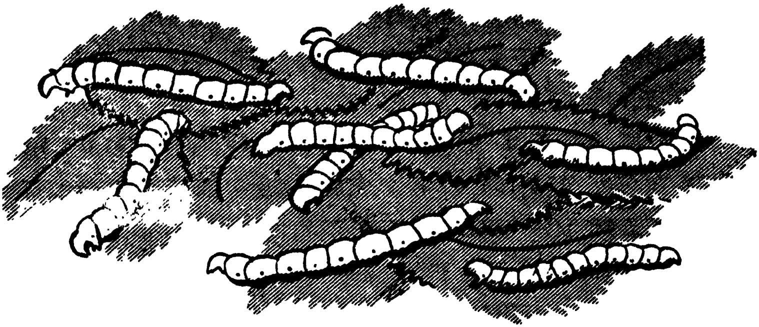
ऊन और रेशम के रेशे सूक्ष्मदर्शक द्वारा इस रूप में देखे जाते हैं।

बनाते हैं। फ़ार्माल्डिहाइड अणुओं के और बड़े 'पॉलीमर' पौधे बनाते जाते हैं—पहले अल्कोहल, तब चीनी, मांड और आखिरकार सेल्यूलोज़।

लिनेन पटसन के पौधों से बनती है। रुई की तरह यह भी लगभग शुद्ध सेल्यूलोज़ ही है; लेकिन इसके रेशे रुई के रेशों से ज्यादा मज़बूत और चमकदार सतह वाले होते हैं। सूक्ष्मदर्शक यंत्र से देखने पर लिनेन और रुई के रेशे एक दूसरे से बिलकुल अलग दिखलाई पड़ते हैं, जैसा कि चित्र में दिखाया गया है। रुई का रेशा ऐंठनदार फ़ीते की तरह होता है जबकि लिनेन का रेशा बांस की तरह आपस में जुड़े पोले पाइपों का बना होता है।

जानवरों से मिलने वाला सबसे महत्वपूर्ण रेशा ऊन असल में प्रोटीन यौगिक है, जिसमें थोड़ा गंधक भी मिला होता है। इसकी रासायनिक बनावट बाल, नाख़ूनों और पंखों की तरह ही होती है। सूक्ष्मदर्शक यंत्र से देखने पर ऊन के रेशे परतदार 'पाइप'-से दिखलाई पड़ते हैं, जैसा कि चित्र से स्पष्ट है। अगर आप पता लगाना चाहें कि आपके सूट के कपड़े या मफ़लर में ऊन है या नहीं तो उसके कुछ रेशों को अलग खींचकर जला दें। अगर वे मुर्गी के पंखों के जलाने की-सी गंध के साथ जलें और बाद में काफ़ी राख बचे तो समझ लें कि वे रेशे सम्भवतः ऊन के ही हैं। इसके विपरीत रुई और लिनेन जलते हुए कागज़ की-सी गंध के साथ जलते हैं और राख बहुत कम बचती है।

कपड़ों के लिए रेशम सबसे मज़बूत रेशा है। ऊन की तरह यह भी प्रोटीन यौगिक है लेकिन इसमें गंधक नहीं होता। रेशम का कीड़ा, जो वास्तव में एक भुनगे का 'कैटरपिलर' होता है, अपने मुंह में एक चिपचिपा द्रव पैदा करता है। हवा में पहुँचते ही यह द्रव



रेशम के कीड़े शहतूत के पत्तों पर पलते हैं ।

बहुत महीन धागे के रूप में सूखकर कड़ा हो जाता है जिसे रेशम का कीड़ा एक कोवे में लपेट देता है । बाद में इन कोवों से अलग करके रेशे महीन तागों के रूप में कात लिये जाते हैं जिनसे सुन्दर मुलायम रेशमी कपड़े बनते हैं ।

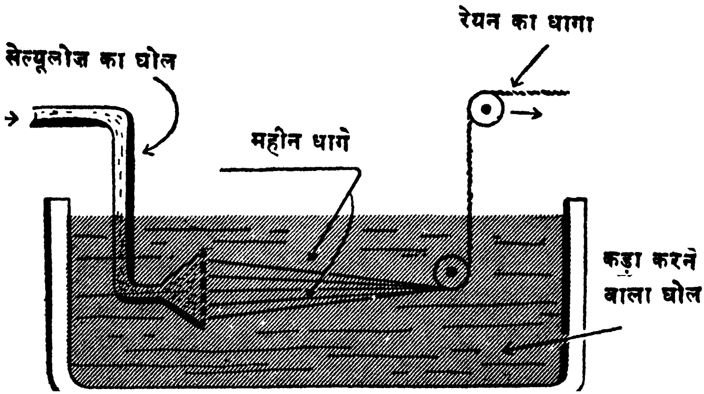
रसायनज्ञों ने जब संश्लिष्ट रेशे बनाना शुरू किया था तो वे रेशम के कीड़ों की ही नकल करते थे । वे एक गाढ़ा द्रव तैयार करके उसके महीन तार खींचते थे और तब उन्हें कड़ा हो जाने देते थे । सबसे ज्यादा मशहूर कृत्रिम रेशा **'रेयन'** है । 'रेयन' बनाने की अनेक विधियां हैं लेकिन **द्रवीय** विधि ही सबसे ज्यादा प्रयुक्त होती है ।

लकड़ी की लुगदी या रुई से प्राप्त सेल्यूलोज़ से काम शुरू किया जाता है । सोडियम हाइड्रॉक्साइड ($NaOH$) और कार्बन डाई सल्फ़ाइड (CS_2) नामक दो रसायनों का उपयोग रेशों को एक सुनहरे, लसलसे द्रव में बदलने के लिए किया जाता है । इस द्रव को तब एक धातु की चकत्ती में बने एक महीन छेद से बाहर निकाला जाता है । रेयन के सबसे महीन तार बनाने के लिए इन छेदों का व्यास १ इंच का ५०००वां भाग होता है । छेदों से निकलने वाले रेशों को हवा

में नहीं बल्कि एक विशेष रासायनिक विलयन में कड़ा किया जाता है। आख़िर में उन्हें एक साथ मिलाकर रेशम के धागों के रूप में बट लिया जाता है और इस तरह रेयन कपड़े बुनने के लिए तैयार हो जाता है।

रेयन से कई प्रकार के कपड़े बुने जा सकते हैं—महीन रेशमी कपड़े, मुलायम मख़मल या सूट बनाने के लिए भारी कपड़े। यह प्रकार रेशों के आकार पर निर्भर करता है और इस पर निर्भर करता है कि उन्हें किस तरह तैयार किया गया है। रेयन का उपयोग मोटे धागे बनाने में भी होता है, जो मोटरों के टायरों, रबड़ के मोज़ों और मशीनें चलाने वाले पट्टों में प्रयोग किये जाते हैं। रसायनज्ञ अब इतनी मज़बूत रेयन बना सकने में समर्थ हैं कि उसका पेंसिल के सीसे के बराबर मोटा एक रेशा आपके शरीर के बोझ को भी सम्हाल सकता है।

सेलोफ़ेन से आप परिचित होंगे। यह भी रेयन का एक प्रकार



यहां दिखाया गया है कि रेयन विस्कोस-पद्धति से किस प्रकार तैयार किया जाता है।

है। यह द्रवीय विधि से बनाया जाता है—सेल्यूलोज़ का गाढ़ा द्रव एक लम्बी पतली दराज़ से निकाला जाता है, नन्हें सूराख़ से नहीं। फिर इसे साफ़ करने और सुखाने के बाद इसकी पतली चादर गोल-गोल लपेट दी जाती है। सेलोफ़ेन मज़बूत, मुड़ सकने वाली और पारदर्शी होती है। यह चीजों की नमी से रक्षा करती है। यही कारण है कि खाद्य पदार्थ, मिश्री, सिगरेट आदि को लपेटने में इसका उपयोग होता है।

दूसरे प्रकार की रेयन **एसीटेट विधि** से बनाई जाती है। रुई के रेशों के रूप में मौजूद सेल्यूलोज़ को फिर एक गाढ़े द्रव में बदला जाता है लेकिन इस बार **एसीटेट अम्ल** से—वही खट्टी चीज़ जो सिरके में मौजूद होती है। इस तरह तैयार होने वाले रेशों से **सेलानीज़** नामक कृत्रिम रेशमी कपड़ा बनता है।

रेयन बनाने में लकड़ी या रुई की प्राकृतिक सेल्यूलोज़ से काम शुरू करना ज़रूरी होता है, लेकिन एक और उपयोगी रेशा **नाइलोन** पूर्णतया संश्लिष्ट यौगिक है और कोयला, पानी तथा हवा से बनता है। इसके अणु लम्बे शृंखलाबद्ध 'पॉलीमर' होते हैं जिनमें कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन और नाइट्रोजन परमाणु मौजूद होते हैं—यानी रेशम की ही तरह की एक प्रोटीन यह होता है। सिर्फ पिघलाकर, एक नन्हें सूराख़ से निकाल और हवा में सुखाकर ही नाइलोन के बहुत मज़बूत, बहुत महीन धागे बनाये जा सकते हैं। आसानी से इसे रंगा जा सकता है और धोने के बाद यह फ़ौरन सूख जाता है। इसीलिए मोज़े, कमीज़ें, अंडरवियर तथा दूसरे पहनने वाले कपड़े बनाने के काम में यह बहुत आता है।

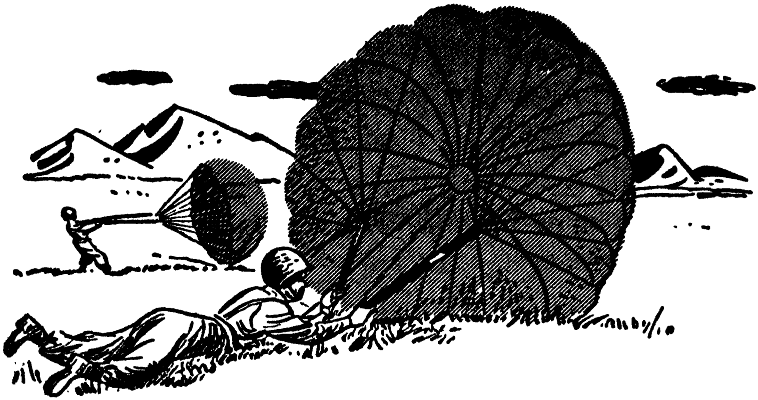
द्वितीय विश्व-युद्ध में नाइलोन तम्बू; लबादे, रस्सियां और पैरा-शूट बनाने में बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ क्योंकि यह जंगलों की गर्म,

नम हवा में सड़ता या फटता नहीं। ब्रुश के बालों, मछली मारने की डोरियों और टेनिस के बल्लों के धागों जैसी घरेलू उपयोग की वस्तुएं इसी से बनाई जा सकती हैं। नाइलोन की ही तरह के कई अन्य पॉलीमर रेशे होते हैं जिनके अपने-अपने अलग-अलग उपयोग होते हैं। खिड़कियों और दरवाजों के परदों, कमीज़ों, सूट, फर्नीचर के गिलाफ आदि के सिलसिले में तुमने **वेलोन, ऑर्लोन, सारान** या **डैक्रॉन** आदि के विज्ञापन देखे होंगे।

एक तीसरे प्रकार का कृत्रिम रेशा घरेलू 'चीज़' से बनाया जाता है। यह अधिकांशत: दूध का प्रोटीन वाला भाग **कैसीन** होता है। पहले हर साल करोड़ों गैलन मक्खन निकाला हुआ परन्तु केसीनयुक्त दूध फेंक दिया जाता था। अब इसके प्रोटीन अणुओं को पॉलीमर कराके और बड़े अणु बनाकर केसीन ऊन बना लिया जाता है। यह पदार्थ बहुत कुछ असली ऊन की तरह ही दिखता और महसूस होता है, यहां तक कि कुछ मानों में असली ऊन से भी अच्छा होता है।

साधारणत: कोई भी चीज़ जो अनेक शक्लों में बदली जा सकती है, प्लास्टिक कहलाती है। सीमेंट, कांच, मिट्टी, पलस्टर, मोम आदि सभी साधारण चीज़ें प्लास्टिक हैं। रसायनज्ञ अब अनेक प्रकार के कृत्रिम प्लास्टिक बनाना जान गये हैं; गर्मी और दबाव के प्रभाव से जिनका आकार अनगिनत प्रकारों में बदला जा सकता है—खिलौने, ग्रामोफ़ोन रिकार्ड, आपके कैमरे की फिल्में, तश्तरियाँ, बटन और हज़ारों दूसरे पदार्थ।

पहला आधुनिक प्लास्टिक का आविष्कार अफ्रीका में बड़े हाथियों की कमी और एक कटी अंगुली की वजह से हुआ था। पूरी कहानी यों है : हाथीदांत से पियानो की कुंजियां, आभूषण और विलियर्ड की



पैराशूट और रस्सियां ज्यादातर नीलोन से बनाई जाती है।

गेंदें बनाई जाती थीं। जिस समय अमेरिका में गृहयुद्ध हो रहा था लगभग उसी समय शिकारियों को अफ्रीका में इतने बड़े हाथी नहीं मिल रहे थे जिनके दांतों से बिलियर्ड की गेंदें बनाई जा सकें। फलत: एक अमेरिकी कम्पनी ने १०,००० डालर का इनाम उस आदमी के लिए घोषित किया जो बिलियर्ड की गेंदें बनाने के लिए हाथीदांत की जगह काम आ सकने वाली किसी चीज़ का आविष्कार कर सके।

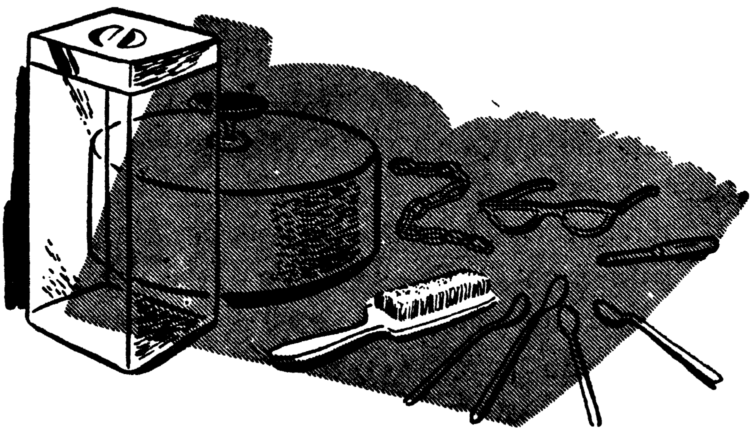
जॉन ह्याट नामक एक छापाख़ाने वाले की अंगुली एक दिन कट गई और वह घाव पर लगाने के लिए कोलोडियन लेने गया। कोलोडियन एक तरह का सेल्यूलोज़ का घोल होता है और उन घोलों से ज़्यादा भिन्न नहीं होता, जिनके बारे में तुम अभी तक पढ़ते आये हो। दवाओं की आलमारी खोलने पर उसने पाया कि कोलोडियन आलमारी के ख़ाने में गिरकर कड़ा पड़ गया है। उत्सुक होकर उसने रबड़ जैसे मुलायम उस पदार्थ को हाथ में उठा

लिया और अंगुलियों की मदद से एक गोली की शकल में बदल दिया। तभी उसे हाथीदांत की जगह काम आ सकने वाली चीज़ के आविष्कार के लिए इनाम वाला विज्ञापन याद आया। परिणाम-स्वरूप वह और उसका भाई अपनी घरेलू रासायनिक प्रयोगशाला में जाकर प्रयोग करने में जुट गये।

आख़िरकार वे एक नया पदार्थ **सेल्यूलॉयड** बना सकने में समर्थ हुए। इनाम तो उन्हें नहीं मिल सका क्योंकि सेल्यूलॉयड से बिलियर्ड की गेंदें नहीं बनाई जा सकती थीं, लेकिन इसका उपयोग दूसरी अनेक चीज़ों में हो सकता था। इस तरह पहले संश्लिष्ट प्लास्टिक पदार्थ का अविष्कार हुआ।

सेल्यूलॉयड में एक बड़ी ख़राबी यह है कि वह बड़ी जल्दी जल उठती है—इसीलिए यह आजकल ज्यादा इस्तेमाल में नहीं आती। लेकिन इसकी जगह कई अन्य अच्छे पदार्थ लेते जा रहे हैं।

अलग-अलग कामों के लिए अलग-अलग तरह के प्लास्टिक



काम में लाये जाते हैं । एक तरह का प्लास्टिक फ़ीनॉल (C_6H_6O) फ़ार्मल्डिहाइड (CH_2O) से बनाया जाता है। इसका आविष्कार पचास साल से भी अधिक समय पहले हुआ था । एक बड़े साधारण प्लास्टिक का नाम है बेकलाइट जिसे चिकना भी किया जा सकता है और कड़ा भी, जिससे यह अनेक कामों में प्रयुक्त की जा सके । बेकलाइट से ही बर्तनों के हैंडिल, बोतलों की कार्गें, बिजली की स्विचें और दूसरे प्रकार की चीज़ें बनाई जाती हैं ।

प्लास्टिक का दूसरा प्रकार होता है **विनिल** प्लास्टिक । यह विनिल एसीटेट ($C_4H_6O_2$) जैसे अणुओं का पॉलीमर होता है । विनिल एसीटेट स्वयं एसीटिलीन (C_2H_2) के सरल अणुओं द्वारा बनाया जाता है । विनिल प्लास्टिक कड़े, मज़बूत और पारदर्शी होते हैं । प्लास्टिकों के इसी समूह का एक पदार्थ जिसे **विनीलाइट** कहा जाता है, काँच की दो परतों को जोड़कर मोटरों में इस्तेमाल किये जाने वाले हवा रोकने के शीशे बनाने में काम आता है । अगर यह कांच टूट जाता है तो इसके टुकड़े बिखरते नहीं बल्कि इसी प्लास्टिक पदार्थ में चिपक जाते हैं । दूसरे विनिल प्लास्टिकों से खाद्यपदार्थों के डिब्बों, बिजली के तारों और कपड़ों को ढकने वाली चीज़ें बनाई जाती हैं और एक प्रकार के विनिल प्लास्टिक से बड़ी मज़बूत गोंद तैयार होती है ।

अमेरिका के दांतों के डाक्टर आजकल एक ऐसा लैम्प इस्तेमाल करते हैं जिसमें प्लास्टिक की एक लम्बी छड़-सी लगी होती है और गर्म लैम्प बिना मुंह के पास लाये वे आपके मुंह के भीतर रोशनी पहुंचा सकते हैं । प्रकाश की किरणें **लूसाइट** की निर्मल छड़ के सहारे ठीक उसी तरह चलती हैं जैसे नलों के भीतर पानी । लूसाइट **अक्रिलिक** समुदाय का एक सदस्य है । इस तरह के प्लास्टिक साफ़



ल्यूसाइट की छड़ के सहारे प्रकाश प्रवाहित किया जा सकता है।

और कांच की तरह होते हैं। ये भी एसीटिलीन से ही बनाये जाते हैं। लड़ाकू विमानों का आगे वाला भाग एक दूसरे अक्रिलिक प्लास्टिक **प्लेक्सीग्लास** से बनता है। निर्माणकर्ता सुन्दर रंगों वाली अक्रिलिक प्लास्टिकों को चादरों, नलियों और छड़ों के रूप में तैयार करते हैं, जिनका उपयोग फिर बाद में अनेक लाभदायक और सजावटी सामान बनाने में होता है।

अब तक जितने तरह के प्लास्टिक बनाये गये हैं, क्या उन सब-के नाम याद रखने में आपको कठिनाई हो रही है? अगर हां, तो फ़िक्र न करें। स्वयं रसायनज्ञों को इन सारे प्लास्टिकों की खोज-खबर रखने में बड़ी परेशानी होती है। इस समय ५,००० से भी ज्यादा प्रकार के प्लास्टिक बनाये जा चुके हैं और नये-नये प्लास्टिकों का रोज़-रोज़ आविष्कार होता जा रहा है।

सबसे आख़ीर में हम एक और समूह का वर्णन करेंगे। यह

समूह है **नाइट्रोजन प्लास्टिकों** का। केसीन प्लास्टिक के रूप में एक की जानकारी तुम पहले ही प्राप्त कर चुके हो, लेकिन कुछ और नाइट्रोजन प्लास्टिकों को बक्सुए, आभूषण और बटन बनाने के लिए बड़ी सफलतापूर्वक काम में लाया जाता है। सोयाबीन, जानवरों का मलपदार्थ, अंडे की सफ़ेदी और कॉफ़ी के दानों से भी नाइट्रोजन प्लास्टिक तैयार किये जा सकते हैं।

सौ वर्ष से भी कम समय में प्लास्टिक रासायनिक उद्योग के प्रमुख पदार्थों में से एक हो गये है; करोड़ों टन प्लास्टिक हर साल तैयार किया जाता है। अनेक कामों में उन्होंने दूसरे पदार्थों की जगह ले ली है क्योंकि अब हमारे लिए लकड़ी या धातुओं-से दिखने वाले प्लास्टिक भी मौजूद हैं और संगमरमर, कांच या चमड़े की तरह दिखने वाले भी।

अनेक चीज़ों को बनाने में प्लास्टिकों ने दूसरे पदार्थों की जगह ले ली है और इसका नतीजा अच्छा ही हुआ है क्योंकि वे पदार्थ और अच्छे बनने लगे हैं। खिलौनों, कैमरे के बक्स या रेडियो का कैबिनेट बनाते समय पदार्थ को काटना, इच्छित आकार का बनाना और उस पर मुहर लगाना ज़रूरी होता है। फिर उन्हें गलाने, जोड़ने या कीलों से जड़ने की भी ज़रूरत पड़ सकती है। इसके विपरीत प्लास्टिक को सिर्फ़ एक बार दबाकर या सांचे में ढालकर ही मनचाही चीज़ बनाई जा सकती है।

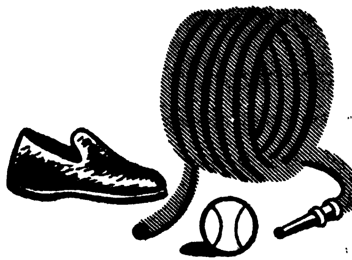
प्लास्टिक से बनी चीज़ें धातु से बनी चीज़ों से हल्की होती हैं। साथ ही वे बाहर-भीतर हर जगह रंगी जा सकती हैं, धातुओं के समान सिर्फ़ ऊपरी सतह पर ही नहीं। प्लास्टिकों के पक्ष में एक बात और है कि वे खेती की पैदावार से बनाई जा सकती हैं, जबकि धातुएं खनिजों से मिलती हैं और खनिजों का पता पहले ज़मीन के

भीतर लगाना और फिर उन्हें खोदकर बाहर निकालना होता है। इसमें परेशानी होती ही है, खर्च भी बहुत काफ़ी होता है।

घर में या बाहर आप स्वयं देख सकते हैं कि ये रंगीन चमकदार पदार्थ साधारण से साधारण वस्तुओं को भी कितना सुन्दर और आकर्षक तथा उपयोगी और कार्यक्षम बना देते हैं।

१२

रबड़



कई शताब्दियों पहले मध्य और दक्षिणी अमेरिका में रहने वाले अमेरिकी आदिवासियों ने एक विचित्र जंगली पेड़ देखा। उसकी छाल को किसी जगह से काट देने पर उसमें से गाढ़े दूध का द्रव बड़ी-बड़ी बूंदों के रूप में निकलने लगता था। ये बूंदें आंसुओं की तरह दिखलाई पड़ती थीं, इसलिए इस पेड़ का नाम ही उन्होंने 'रोने वाला पेड़' रख दिया। आदिवासियों को ही यह भी पता लगा कि यह द्रव गोंद जैसी एक अजीब-सी चीज़ के रूप में कड़ा पड़ जाता था और ज़मीन से टकराकर उछलता था।

अमेरिका की खोज के बाद ही स्पेनी अन्वेषक मेक्सिको पहुंचे और वहां उन्होंने देखा कि एजटेक आदिवासी आधुनिक 'बास्केटबॉल' (अमेरिका में अति प्रचलित एक खेल) की तरह का एक खेल खेलते थे, जिसमें वे एक उछलने वाली गेंद इस्तेमाल करते थे। जब वे यूरोप लौटे तो अपने साथ इस विचित्र गोंद के कुछ टुकड़े भी लेते गये। जोज़ेफ़ प्रीस्ले ने भी यह गोंद देखी। उन्होंने कहा : "मैंने एक ऐसी चीज़ देखी है जो कागज़ पर काली पेंसिल के निशानों के मिटाने के लिए अद्वितीय है।" पेंसिलों के निशान मिटाने में प्रयोग किये जाने के कारण ही इस गोंद का नाम **रबड़** (मिटाने वाला) पड़ गया।

अब यूरोप और अमेरिका दोनों ही देशों में विचार किया जाने लगा कि रबड़ और किन कामों में उपयोग किया जा सकता है।

कपड़ों पर इसे पोत देने पर कपड़ों के ऊपर पानी का कोई असर नहीं पड़ता था, लेकिन गर्मियों में वह चिपचिपा हो जाता था और सर्दियों में कड़ा और सख्त। इस पर भी कारखानों में रबड़ के जूते, मोज़े, त्रिपाल और दूसरी चीज़ें बनाई जाने लगीं।

रबड़ को मज़बूत और लचीला बनाने की भी समस्या थी। इसका हल चार्ल्स गुडईयर नामक एक अमेरिकी आविष्कारक ने निकाला। इस बार भी यह हल एक 'सुखद संयोग' के कारण ही निकल सका, और इतना तो आप अब तक समझ ही गये होंगे कि ऐसे संयोग अक्सर हो ही जाया करते हैं। एक दिन गुडईयर गंधक और रबड़ के मिश्रण के साथ प्रयोग कर रहे थे कि थोड़ा-सा द्रव एक गर्म अंगीठी पर गिर गया। रबड़ मज़बूत हो गया और लचीला भी बना

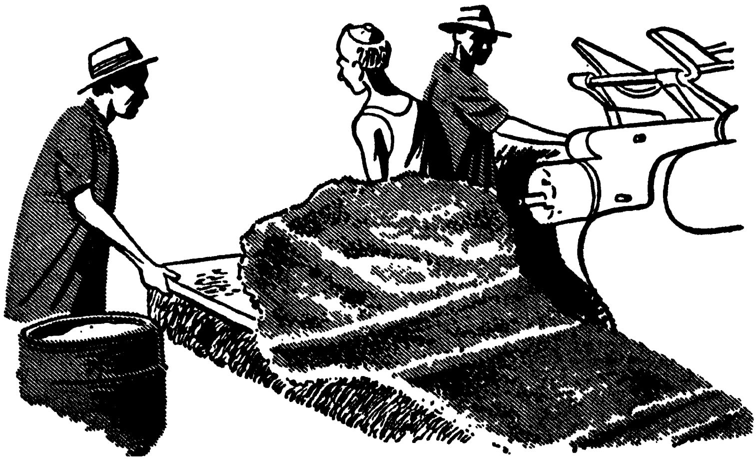


द्रव रबड़ एक-एक बूंद करके संचित किया जाता है।

रहा। गुडईयर समझ गये कि वे सही रास्ते पर हैं। अनेक और प्रयोग करने के बाद उन्होंने **गंधकयुक्त रबड़** को पेटेन्ट कराया। इस रबड़ का नाम उन्होंने रोमन अग्नि देवता 'वल्कन' के नाम पर 'वल्कनाइज़्ड रबड़' रखा। इस आविष्कार के होते ही रबड़ की मांग बहुत बढ़ गई और दक्षिणी अमेरिका तथा पूर्वी एशिया के गर्म, नम देशों में रबड़ के बड़े-बड़े बाग़ लगाये जाने लगे।

द्रव रबड़, जिसे **'लैटेक्स'** कहा जाता है, **'पैरा'** रबड़-वृक्ष से निकाला जाता है। इस पेड़ की ऊंचाई ५० फुट से भी ज़्यादा होती है। इस द्रव का केवल एक तिहाई भाग रबड़ होता है और बाकी पानी।

रबड़ निकालने के लिए पेड़ का तना एक जगह पर काट दिया जाता है और द्रव को एक प्याले में बूंद-बूंद करके इकट्ठा किया जाता है। द्रव इकट्ठा करने वाले कर्मचारी एक पेड़ से दूसरे पेड़ की



क्रेप रबड़ दानेदार चादरों (शीटों) के रूप में तैयार हो जाता है।

छाल काटते और लैटेक्स के प्याले बड़े बर्तन में उंड़ेलते जाते हैं। इस तरह इकट्ठा किया हुआ लैटेक्स तब एक केन्द्र में लाया जाता है जहां उसे छानकर धूल अलग की जाती है। तब उसमें थोड़ा तेज़ाब डाला जाता है जिससे रबड़ के छोटे-छोटे कण जमकर सने हुए आटे-से हो जाते हैं। फिर उसे 'रोलरों' के बीच से गुज़ारा जाता है जिससे उसका पानी निकल जाय। रबड़ तब दानेदार काग़ज़ की तरह दानेदार चादरों के रूप में आ जाता है। यही रबड़ खेलने वाले 'क्रेप सोल' के जूतों में इस्तेमाल किया जाता है। कुछ बाग़ों में रबड़ की चादरों को कारख़ानों में भेजने के लिए एक धुआंघर में लटका दी जाती हैं जिससे वे सूख जायं।

कुछ रबड़ 'लेटैक्स' की ही दशा में पीपों में भरकर जहाज़ों पर लाद दिया जाता है। तब सांचों में ढालकर उससे दस्ताने, नहाने की टोपियां, चादरें आदि बनाई जाती हैं। फिर भी ज़्यादा चीज़ें गंधकयुक्त रबड़ की ही बनती हैं। कच्चे रबड़ को सने आटे-सा बना लिया जाता है और तब उसमें गंधक तथा कुछ अन्य 'पूरक' वस्तुएं मिला दी जाती हैं। ये पूरक वस्तुएं अन्तिम पदार्थ को ज़्यादा अच्छा तो बनाती ही हैं, उसे रंगीन भी कर देती हैं। उदाहरण के लिए, हल्के पीले रंग के कच्चे रबड़ में कुछ कार्बन का महीन चूरा मिलाने से वह चमकदार काले रंग का हो जाता है जिसका उपयोग मोज़े और टायर बनाने में होता है। तब इस मिश्रण को दबाकर या सांचे में ढालकर इच्छित आकार का बना लिया जाता है और गर्मी तथा काफ़ी दबाव का उपयोग करके 'वल्कनाइज़' कर लिया जाता है।

संसार में पैदा होने वाले रबड़ का तीन-चौथाई भाग मोटरों के टायर-ट्यूब बनाने में काम आता है। टायर का मुख्य हिस्सा रबड़



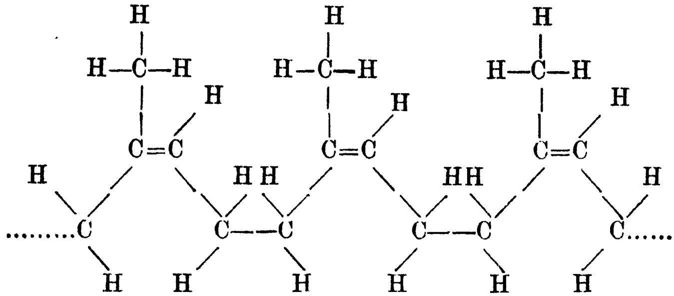
रबड़ टायर सांचे में ढालकर फिर वल्कनाइज्ड कर लिया जाता है।

की चौड़ी पट्टियों से बनाया जाता है जिनमें मज़बूती के लिए रूई, रेयन या नाइलोन के धागे दबाकर चिपका दिये जाते हैं। फिर एक सांचे में रखकर 'वल्कनाइज़' करने के बाद उसे तराशा और चिकनाया जाता है।

द्वितीय विश्वयुद्ध में जापानियों ने पूर्वी एशिया के रबड़-उत्पादक देशों पर कब्ज़ा कर लिया था और अमेरिका को प्राकृतिक रबड़ मिलना बन्द हो गया था। ठीक इसी समय ट्रकों, जीपों, विमानों के टायर, व गुब्बारे, जीवन रक्षक नौकाएं तथा बैटरियां बनाने के लिए अमेरिका को रबड़ की सख्त ज़रूरत थी।

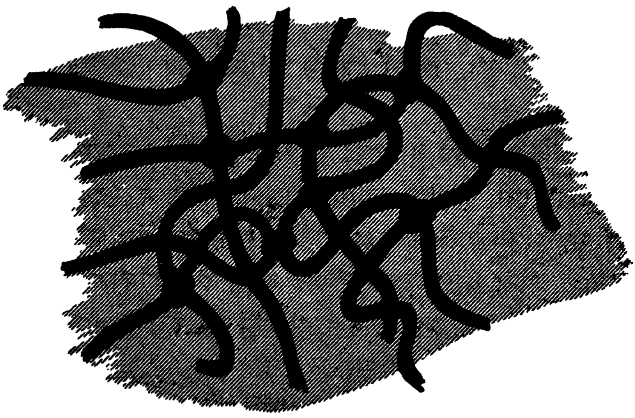
लेकिन अमेरिकी वैज्ञानिक पहले से तैयार थे। वे प्राकृतिक रबड़ की बनावट का अध्ययन बरसों से कर रहे थे और उसकी जगह पर काम आ सकने वाली चीज़ की खोज में प्रयोग कर रहे थे। वे जानते थे कि रबड़ एक हाइड्रोकार्बन है जिसके प्रति पाँच कार्बन परमाणुओं

के साथ आठ हाइड्रोजन परमाणु संयुक्त हैं। असल में जब हाइड्रो-कार्बन **आइसोप्रीन** (C_5H_8) को स्थिर रखा जाता है तो वह 'पॉलीमर' बनाने के बाद रबड़ जैसी चीज़ में बदल जाता है।



प्राकृतिक रबड़ के अणु का एक भाग।

रसायनज्ञों का विचार है कि प्राकृतिक रबड़ का प्रत्येक अणु १०,००० आइसोप्रीन अणुओं की एक बहुत लम्बी शृंखला है। यहाँ आप ऐसी शृंखला का एक सादा ख़ाका देख रहे हैं। वास्तव में यह



वल्केनाइजिंग से रबड़ के लम्बे अणुओं का आपस में गुंथकर जाल बन जाता है।

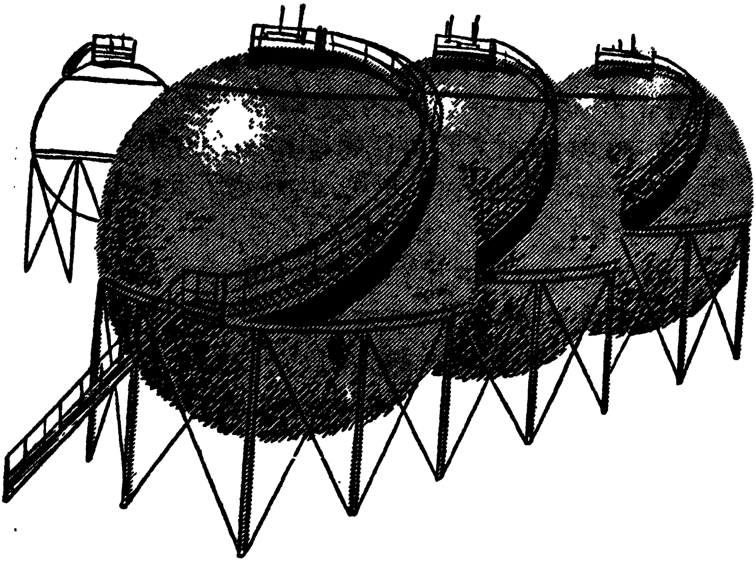
हर दिशा में मुड़ती रहती है, उलझे हुए तार की तरह, और इसी कारण शायद रबड़ में उछलने की क्षमता होती है।

ये लम्बे अणु आपस में गुंथकर एक जाल-सा बुन लेते हैं। रबड़ को जब 'वल्कनाइज़' किया जाता है तो गंधक के परमाणु रबड़ के अणुओं से जगह-जगह पर फंस जाते हैं। फल यह होता है कि रबड़ और ज़्यादा मज़बूत और दृढ़ हो जाता है। अगर ये गांठें कम होती हैं, तो रबड़ मुलायम और लचीला होता है, लेकिन ज़्यादा हों तो वह भारी और कड़ा हो जाता है। यही कड़ा रबड़ कंघे बनाने के काम आता है।

रसायनज्ञों ने महसूस किया कि संश्लिष्ट रबड़ बनाने के लिए इन लम्बे शृंखला बद्ध पॉलीमरों को बनाने का तरीक़ा जानना होगा। उनके द्वारा बनाई गई रबड़ की जगह पर काम आ सकने वाली पहली चीज़ का नाम **नियोप्रीन** रखा गया। यह एसीटिलीन और नमक के तेज़ाब से बनाया जाता है। हालांकि इसकी कीमत प्राकृतिक रबड़ से ज़्यादा होती है, फिर भी इसका इस्तेमाल किया जाता है क्योंकि यह गैसोलीन, तेल, धूप या हवा से प्रभावित होकर आसानी से टूटती नहीं है।

युद्ध के पहले ही अमेरिका की सरकार रबड़ की कुछ कम्पनियों को '**ब्यूना एस**' नामक कृत्रिम रबड़ की खोज में मदद कर रही थी। यह कृत्रिम रबड़ **ब्यूटाडीन** और **स्टायरीन** नामक दो पदार्थों से बनाया जाता था। इसलिए जब जापानियों के कारण अमेरिका को प्राकृतिक रबड़ मिलना बन्द हो गया तो दर्ज़नों और कारख़ाने ज़रूरत भर के लिए 'ब्यूना एस' बनाने लगे।

'ब्यूना एस' इतना लाभदायक साबित हुआ कि लड़ाई के बाद भी अधिकांश कम्पनियां इसे बनाती रहीं और इसका उपयोग भारी



ब्यूटाडीन बड़े-बड़े गोल हौजों में दबाव के नीचे रखा जाता है।

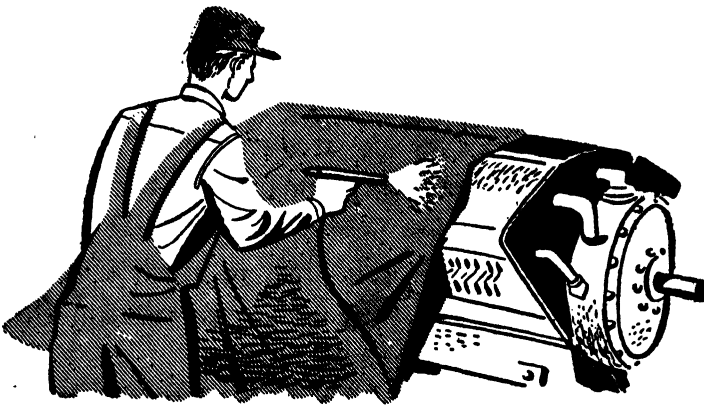
मोटरों और ट्रकों में होता रहा। आज रबड़ की जगह पर काम आने वाली जितनी चीज़ें हैं उनमें 'ब्यूना एस' सबसे ज़्यादा इस्तेमाल किया जाता है। यह प्राकृतिक रबड़ के ही समान है। अमेरिका में बनने वाले संश्लिष्ट रबड़ का ४/५ का भाग 'ब्यूना एस' है।

रासायनज्ञ अब रबड़ की जगह काम आने वाली साठ से ज़्यादा प्रकार की चीज़ें बना सकते हैं। लेकिन निर्माणकर्ता इन्हें रबड़ का 'स्थानापन्न' कहना पसंद नहीं करते क्योंकि इन वस्तुओं के कुछ ऐसे उपयोग हैं जो प्राकृतिक रबड़ के भी नहीं थे। इन रबड़ जैसी चीज़ों को वे **इलास्टोमर** कहना ज्यादा पसन्द करते हैं।

ब्यूटिल एक बड़ा अच्छा इलास्टोमर है, जो हवा को रबड़ से १० गुना देर तक रख सकता है। इसीलिए यह मोटरों के ट्यूब

बनाने के लिए आदर्श पदार्थ है। **कोरोसील** विनिल क्लोराइड का रबड़ जैसा 'पॉलीमर' है। दूसरे इलास्टोमरों की तरह यह आसानी से खींचा तो नहीं जा सकता लेकिन यह जल्दी जलता नहीं और अनेक रंगों में रंगा जा सकता है। पानी की बौछार से बचाने वाले परदे, पेटियां, बरसाती कोट, छाते आदि अनेक चीज़ें अब कोरोसील से बनने लगी हैं।

हर साल जाड़ा खत्म होने पर हम अपने ऊनी कपड़े, कम्बल आदि कीड़ों से बचाने के लिए 'मॉथ बॉल' में रख देते हैं। उसी तरह लड़ाई ख़त्म होने के बाद कुछ टैंक, तोपें, यहाँ तक कि बड़े-बड़े लड़ाकू जहाज़ भी ऊनी कपड़ों की तरह सम्हाल कर 'मॉथ बॉल' में रख दिये जाते हैं। निश्चय ही इसका उद्देश्य उन्हें कीड़ों से नहीं बल्कि जंग लगने और रंग उड़ने से बचाना होता है। यह काम अक्सर **थायो-कोल** नामक एक इलास्टोमर को उनके धातु वाले हिस्से पर फुहारे से छिड़क कर किया जाता है। यह पदार्थ प्राकृतिक रबड़ की तरह



मशीनरी संश्लिष्ट रबड़ की छिड़काव से सुरक्षित रखी जा सकती है।

मज़बूत तो नहीं होता लेकिन आसानी से गैसोलीन, ग्रीज़ या दूसरे रसायनों से प्रभावित भी नहीं होता। इसका छिड़काव लसलसे द्रव के रूप में किया जाता है और सूखने पर इनकी कड़ी परत बन जाती है जो स्टोर में या जहाजों में चढ़ाते-उतारते समय मशीनों की रक्षा करती है। थायोकोला का उपयोग छापेखानों में टाइपों के ऊपर स्याही फेरने वाले रोलर बनाने में भी किया जाता है।

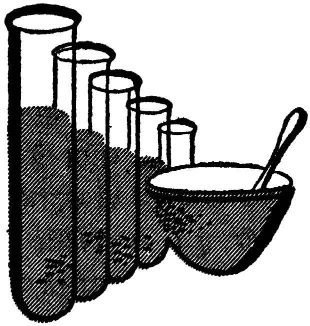
दर्जनों तरह के इलास्टोमर रसायनज्ञ अब तक बना चुके हैं, परन्तु उनमें से कोई भी प्राकृतिक रबड़ जैसा नहीं है। फिर भी रसायनज्ञों को इससे परेशानी नहीं होती। वे नये-नये कामों के लिए विशेष इलास्टोमर बनाने में व्यस्त हैं। इनमें से कुछ पदार्थ भारी मशीनों के धक्कों को कम करने के लिए गद्दियों का काम देते हैं। दूसरों का उपयोग तेज़ रसायनों से काम करने वाले आदमियों की सुरक्षा के लिए कपड़े बनाने में होता है। बिजली की मथानी की मदद से लैटेक्स में हवा भरकर 'फोम रबड़' बनाया जाता है। ठीक उसी तरह जैसे रसोई में मथानी से मक्खन मथा जाता है। दरियाँ, तकियाँ और कुर्सियों की गद्दियाँ ऐसे रबड़ से बनती हैं।

विमानों के कुछ हिस्से विशेष इलास्टोमरों से बनाये जाते हैं। ये हिस्से उत्तरी ध्रुव पर शून्य से १०० अंश तापक्रम कम हो जाने पर भी मज़बूत और लचकदार बने रहते हैं।

इलास्टोमरों का काम करने वाले वैज्ञानिकों और इंजीनियरों का कहना है कि इन मूल्यवान पदार्थों के अनेक नये उपयोगों का पता भविष्य में ज़रूर लगेगा। उन्हें भरोसा है कि कुछ ही बरसों में हम रबड़ की सड़कों पर ऐसी मोटरें दौड़ाया करेंगे जिनके टायर तो रबड़ के होंगे ही, उनमें लगी 'स्प्रिंग' और उनके ढांचे भी रबड़ के होंगे।

१३

रसायन शास्त्र के अन्य उपयोग



अब तक आपने जो कुछ पढ़ा है उससे आपकी समझ में यह तथ्य भली प्रकार से आ गया होगा कि रसायन शास्त्र हमारे चारों ओर है और हमारे जीवन को कई प्रकार से प्रभावित करता है। लेकिन इस किताब में तो हम रसायन शास्त्र और उसके उपयोगों के बारे में बताना शुरू ही कर पाये हैं! एक किताब क्या, कई किताबों में भी उसके बारे में सब कुछ नहीं बताया जा सकता। उस पर रसायन शास्त्र का विकास इतनी तेज़ी से हो रहा है कि हर रोज़ नई-नई खोजें सामने आती जा रही हैं।

रसायन शास्त्र किस तरह मानवता के हित में काम करता है, अपनी इस कहानी को ख़त्म करते हुए हम इस विज्ञान की उन शाखाओं के बारे में थोड़ा-थोड़ा बतायेंगे जिनके बारे में अभी तक कुछ नहीं बताया गया।

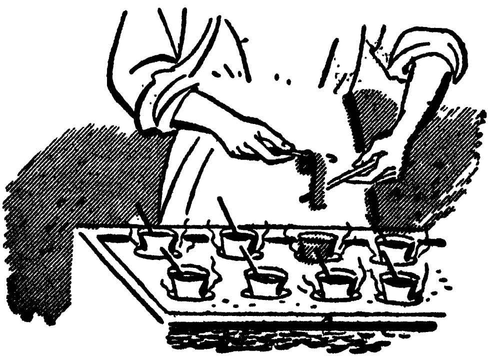


रोग़न : एक ब्रश से दीवार पर पानी फेरिये तो वह भाप बनकर उड़ जायेगा और पानी का नाम भी नहीं रह जायगा। लेकिन अगर आप उसी ब्रश से रोग़न दीवार पर फेर दें तो

वह एक रासायनिक क्रिया के साथ सूखेगा। इस क्रिया में रोग़न में मिला हुआ तेल ऑक्सीकरित होकर एक मजबूत पपड़ी बना लेता है। तेल के साथ **रोग़न**, जैसे सीसे या जस्ते की ऑक्साइड, मिला रहता है, जो पुती हुई सतह को नीचे से झलकने नहीं देता। रोग़न को सफ़ेद के अलावा और किसी रंग में बनाने के लिए उसमें रंग प्रदान करने वाले यौगिक मिला दिये जाते हैं।

इस उद्योग में काम करने वाले रसायनज्ञों ने पिछले कुछ वर्षों में अनेक नये पदार्थ बनाना जान लिया है। अब हमें प्लास्टिक रोग़न और रबड़ रोग़न भी मिल सकते हैं। ये पानी से अप्रभावित रहते हैं। केसीन रोग़न पानी में घुल जाते हैं। आग से अप्रभावित रहने वाले रोग़न भी अब मिलते हैं।

रंग : अब से लगभग सौ साल पहले तक हमारे सारे रंग पौधों, जानवरों और मिट्टी से पैदा होते थे। वे बड़े मंहगे और घटिया किस्म के होते थे। अब लगभग हरेक रंग कोलतार से जटिल रासायनिक विधियों द्वारा बनाया जाता है। कपड़ों को रंगने में आजकल ५०००



भाप की मेज पर रंग के वर्तन परिक्षित किये जाते हैं।

तरह के रंग काम में आते हैं। कपड़ों को रंगने वाला रंग ऐसा होना चाहिए जो उन्हें नुकसान न पहुंचाये, पानी से धुले नहीं और धीमा न पड़े।

दूसरी तरह के रंगों से जूतों की पालिश, मोमबत्ती, साबुन, मिश्री और अन्य अनेक चीज़ें रंगी जाती हैं।

चमड़ा : हज़ारों बरस पहले पता चला था कि जानवरों का चमड़ा धुएं से रक्षित रखा जा सकता है और फिर उससे कपड़े या दूसरी चीज़ें बनाई जा सकती हैं। तभी से चमड़े का उद्योग होता चला आ रहा है। बाद में पता चला कि कुछ पेड़ों की छाल से यह काम धुएं से कहीं ज्यादा अच्छी तरह किया जा सकता है। ये छालें चमड़े के बाल भी उड़ा देती हैं।

चमड़ा आज भी क़रीब-करीब उसी तरीक़े से तैयार किया जाता है। खालें पहले तेज़ाबों में डुबोकर फुला ली जाती हैं; उसके बाद पेड़ों की छाल से भरे टबों में भेज दी जाती हैं। छाल में **टैनिन** नामक एक रसायन होता है जो धीरे-धीरे खाल को चमड़े में बदल देता है। अब एक नया और जल्दी कारगर होने वाला तरीक़ा भी मालूम हो गया है जिसमें टैनिन की जगह क्रोमियम के यौगिक प्रयोग किये जाते हैं। यह विधि भी काफ़ी इस्तेमाल की जाती है।

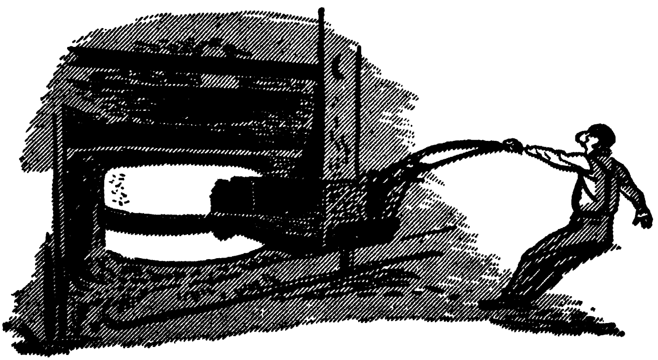
कोट में अब चमड़े की जगह पर प्लास्टिक मिला हुआ कपड़ा इस्तेमाल किया जाता है, लेकिन प्राकृतिक चमड़ा अब भी हमारी अधिकांश चीज़ें जूते, पेटियां, दस्ताने और फ़र्नीचर के ग़िलाफ़ बनाने में इस्तेमाल किया जाता है।

मिश्री : इसमें ज़रा भी संदेह नहीं कि यह रासायनिक उद्योग की सबसे ज्यादा ज़ायकेदार शाखा है। शीरे, शहद, चाशनी या दूध के उत्पादनों के साथ खुशबू मिलाकर खूब स्वादिष्ट मिश्रियां आजकल

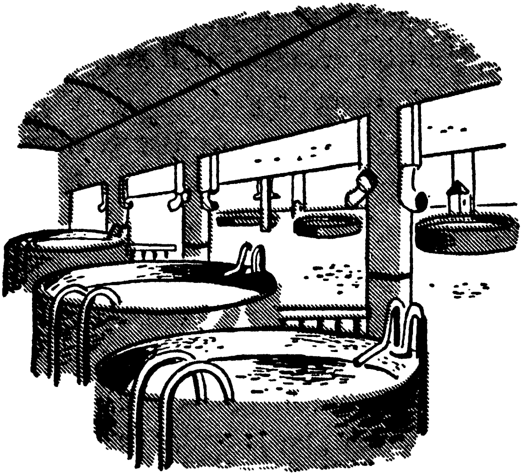
बनाई जाती हैं। रसायनज्ञों को इनके निर्माण में भी पूरी सावधानी बरतनी पड़ती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में ही हर साल ढाई अरब पौंड से ज्यादा मिश्री की खपत है।

कांच : यह हमारा सबसे पुराना प्लास्टिक है, लेकिन इसके उपयोगों की संख्या जितनी आज है पहले कभी नहीं रही। यह **सिलिका बालू** (SiO_2) को साधारणतः सोडा या चूने के साथ मिलाकर बनाया जाता है। खिड़कियों के शीशे, लेंस, मेज पर रखने के सामान आदि बनाने के लिए कई तरह का कांच बनता है। **कता हुआ कांच** पिघले कांच को महीन धागों में खींचकर बनाया जाता है। इन धागों से बना कपड़ा मज़बूत और लचीला होता है तथा हवा, पानी या दूसरे रसायनों से प्रभावित नहीं होता। इस पर आग का भी असर नहीं होता, इसीलिए अक्सर इसका उपयोग परदे और सजावटी कपड़े बनाने में होता है।

साबुन : औसत अमेरिकी परिवार में हर साल १०० पौंड से ज्यादा साबुन ख़र्च होता है। साबुन एक कार्बनिक यौगिक है जो



कांच बड़े-बड़े बर्तनों में पिघलाया जाता है।



साबुन मथकर चिकना बनाया जाता है।

क्षारीय जल और चर्बी को एक साथ बड़ी-बड़ी केतलियों में उबालकर तैयार किया जाता है। अक्सर इन केतलियों का आकार इतना बड़ा होता है कि उनमें १७५ टन मिश्रण तक रखा जा सकता है। फिर अशुद्धियां दूर करने के लिए नमक मिलाने के बाद उन्हें मथकर चिकना बना दिया जाता है। तभी रंग और खुशबू भी मिला दी जाती हैं। इस मिश्रण को बड़ी-बड़ी चादरों में जमा लेने के बाद अलग-अलग बट्टियों के रूप में काट लिया जाता है।

गंदे कपड़ों पर एक ग्रीज़ की परत जम जाती है जिस पर धूल के कण चिपक जाते हैं। साबुन ग्रीज़ की परत को तोड़ देता है और गर्द पानी से धुल जाती है। साफ़ करने वाली कोई भी चीज़ शोधक कहलाती है। लेकिन पिछले कुछ बरसों से इस नाम का प्रयोग पेट्रोलियम तेलों से बने नये रासायनिक शोधकों के लिए किया जाता है, जानवरों या सब्ज़ियों की चर्बी से बने साबुनों के लिए नहीं। ये

संश्लिष्ट शोधक पदार्थ साधारण साबुन से कहीं ज्यादा अच्छे हैं क्योंकि वे काम ज्यादा आसानी से करते हैं और गंदा पानी कम पैदा करते हैं।

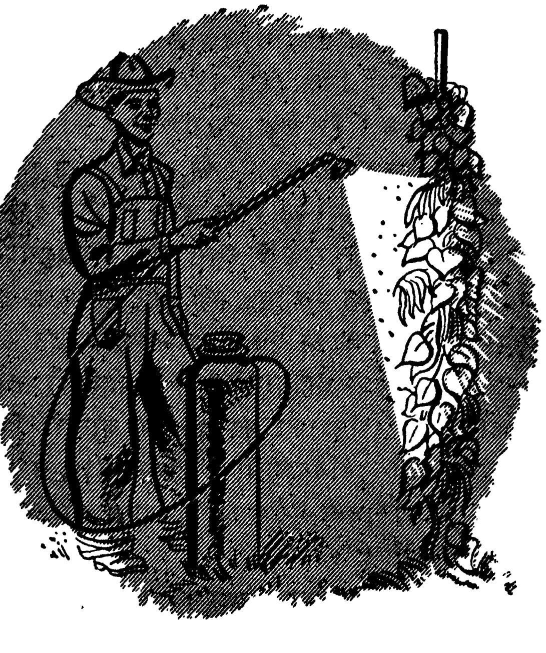
शृंगार सामग्री : ये रासायनिक पदार्थ मुख्यत: चेहरे का पाउडर, रूज, क्रीमें और बालों के तेल आदि होते हैं, इसलिए स्वभावत: लड़कियों और स्त्रियों की इनमें विशेष रुचि होती है। चेहरे के पाउडर में खरिया, अबरक, जस्ते की ऑक्साइड, पिसी मिट्टी, मांड, रंगने वाले पदार्थ और खुशबू पड़ती है। लिपस्टिक शहद की मक्खियों के मोम और कोलतार के लाल रंगों से बनती है। ठंडी क्रीम पानी और तेल—कभी-कभी भेड़ की ऊन से प्राप्त ग्रीज 'लैनोलिन'—का फेनदार मिश्रण है।

शृंगार सामग्रियों का उपयोग मिस्र में ७००० साल पहले होता था। आज करोड़ों रुपये सिर्फ़ इन्हीं पर ख़र्च होते हैं।

अपराध की खोज : हर वैज्ञानिक एक तरह का जासूस होता है क्योंकि प्रकृति के रहस्यों को जानने की कोशिश वह हमेशा करता रहता है। लेकिन अपराधियों की खोज करने में भी रसायनज्ञ पुलिस की सहायता करते हैं। अपराध के स्थल पर मिला हुआ एक कपड़े का टुकड़ा, रंग का धब्बा या सिर्फ़ एक बाल ही कभी-कभी रसायनज्ञों को यह बताने को काफ़ी होते हैं कि अपराधी कौन था या अपराध किस तरह किया गया था। वाशिंगटन में अमेरिकी 'फ़ेडेरल ब्यूरो ऑव इन्वेस्टीगेशन्स' (अमेरिका का केन्द्रीय जासूसी विभाग) के पास एक बहुत बड़ी रसायनशाला है जिसमें अच्छे से अच्छे उपकरण मौजूद हैं और जहां हर तरह के पदार्थों का विश्लेषण और पहचान की जा सकती है।

कीटाणुनाशक : ये रसायन फ़सलों को नुकसान पहुंचाने, घर का

सामान नष्ट करने या बीमारी फैलाने वाले कीड़ों को नष्ट करने के काम में आते हैं। आजकल प्रचलित कीटाणुनाशकों में से एक बहुत अच्छा नाशक द्वितीय विश्वयुद्ध के समय अमेरिका के सरकारी रसायनज्ञों ने बनाया था। इस यौगिक का रासायनिक नाम **डाईक्लोरो डाईफ़ेनिल ट्राईक्लोरोईथेन** है और मेरा ख़्याल है कि अब आप समझ गये होंगे कि इसे डी० डी० टी० (पूरे का नाम का संक्षिप्त) क्यों कहा जाता है। डी० डी० टी० का घोल जब हवा में छिड़का जाता है तो उसके रवों की एक पतली परत हर उस जगह पर जम जाती है जहां यह फुहार पड़ती है। इसके बाद महीनों तक ये रवे कुछ विशेष कीटाणुओं को मारते रहते हैं।



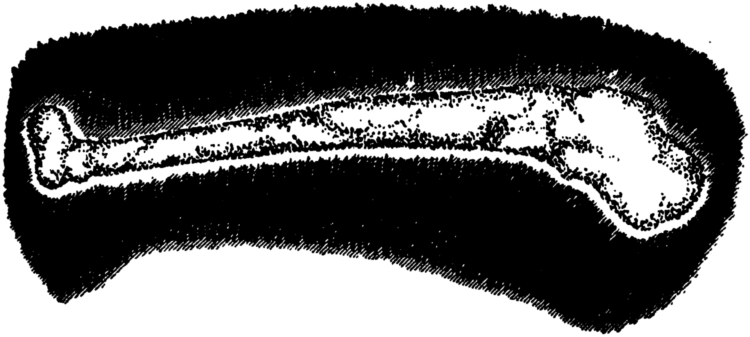
इसके अलावा दर्जनों और कीटाणुनाशक हैं। कुछ फसलों पर पाउडर के रूप में छिड़के या घोल बनाकर फुहारों के रूप में छोड़े जाते हैं। दूसरे गैस के ही रूप में कीड़े मारते हैं।

लकड़ी की चीजें : शहतीरों, प्लाइवुड और इमारती लकड़ी के अलावा लकड़ी का उपयोग प्लास्टिक के लिए सेल्यूलोज़ बनाने में होता है। लकड़ी से रासायनिक क्रियाओं द्वारा अल्कोहल, तेज़ाब, गोंद और चीनी तक बनाई जा सकती है।

लकड़ी का एक बहुत फ़ायदेमंद उपयोग कागज़ बनाने में होता है। लकड़ी—साधारणतः स्प्रूस, पोलर या चीड़—पहले पीसकर लुगदी बनाई जाती है। बढ़िया किस्म का कागज़ बनाने के लिए रसायनों का उपयोग किया जाता है, जिससे दूषित पदार्थ अलग हो जाते हैं और शुद्ध सेल्यूलोज़ बच रहती है। लुगदी का रंग उड़ाकर मिट्टी या माड़ उसमें मिलाया जाता है और रेशों को जाल में बुनकर पतले तत्व बना लिये जाते हैं। तब उन्हें गर्म रोलरों पर दौड़ाकर उनकी सतह चिकनी बना ली जाती है।

फ़ोटोग्राफ़ी : तस्वीर उतारने में हर कदम पर रसायन शास्त्र की ज़रूरत पड़ती है। जब आप कैमरे का बटन दबाकर फ़ोटो खींचते हैं तो उस दृश्य से आती प्रकाश की किरणें कैमरे के लेंस वाले छेद से प्रवेश करके 'फ़िल्म' पर प्रभाव डालती हैं। इससे फ़िल्म पर पुते चांदी के यौगिकों में रासायनिक परिवर्तन होते हैं। तब उसे एक रासायनिक घोल में स्थिर करके **उलटा चित्र** बना लिया जाता है। फिर उलटे चित्र को पार करती हुई रोशनी रसायनों की परत वाले एक कागज़ पर डाली जाती है और उसे स्थिर करके **सीधा चित्र** तैयार कर लिया जाता है।

रंगीन फ़ोटोग्राफ़ी में इस्तेमाल होने वाली रासायनिक क्रियाएं



इस हड्डी का चित्र सक्रिय परमाणु-प्रकाश से लिया गया था।

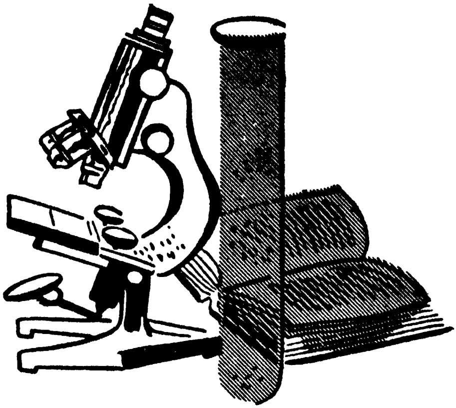
और जटिल होती हैं और उनमें स्वाभाविक रंग भरने के लिए विभिन्न रंगों को काम में लाया जाता है।

परमाणु ऊर्जा: इसे तो असल में **न्यष्टि ऊर्जा** कहा जाना चाहिए क्योंकि इसका सम्बन्ध परमाणु के केन्द्र **न्यष्टि** से है। इसीलिये यह विषय रसायन शास्त्र का न होकर भौतिक विज्ञान का है। फिर भी रसायनज्ञ कुछ ऐसे पदार्थों को अलग और साफ़ करते हैं जो 'परमाणु भट्टियों' को बनाने में काम आते हैं। 'परमाणु भट्टियों' को कुछ दिनों बाद शक्ति उत्पादन केन्द्रों के रूप में प्रयोग किया जाने लगेगा।

'परमाणु भट्टियों' के भीतर बनने वाले सक्रिय पदार्थ रसायनज्ञों को अपना काम आगे बढ़ाने में मदद करते हैं। किसी यौगिक में कुछ परमाणु सक्रिय बनाकर रसायनज्ञ अणुओं की रचना के बारे में ज्यादा जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। जीव रसायनज्ञ पौधों या जानवरों को सक्रिय रसायन खिला कर पता लगाते हैं कि जानदार प्राणी भोजन कैसे हज़म करते हैं।

१४

रसायन शास्त्र और आप



रसायन शास्त्र और उसकी उपलब्धियों के बारे में पढ़ते समय आपने शायद सोचा होगा : "क्या मैं रसायन शास्त्र को अपने जीवन का ध्येय बना सकता हूं ?" आइये, हम इस सम्भावना पर विचार करें।

अमेरिका में रसायन उद्योग में डेढ़ लाख से ज़्यादा आदमी काम करते हैं और यह संख्या रोज़-ब-रोज़ बढ़ती ही जा रही है। कारखानों, विश्वविद्यालयों, अजायबघरों, शोधसंस्थाओं, अस्पतालों, सरकारी प्रयोगशालाओं, परीक्षात्मक प्रयोगशालाओं तथा अन्य अनेक जगहों पर रसायनज्ञों की ज़रूरत पड़ती है। यहां तरह-तरह के काम होते हैं और हर एक में एक विशेष प्रकार की ट्रेनिंग की ज़रूरत होती है।

सबसे पहले तो **शोध रसायनज्ञ** होते हैं जो अपना सारा समय प्रयोग करने और नये सिद्धान्त बनाने में लगाते हैं, जिससे हमारा रसायन शास्त्र का ज्ञान बढ़ सके। ये लोग कालेजों में रसायन शास्त्र का अध्ययन करके और उसके बाद शोध करके डॉक्टर की उपाधि पहले ही ले चुके होते हैं। कुछ शोध रसायनज्ञ

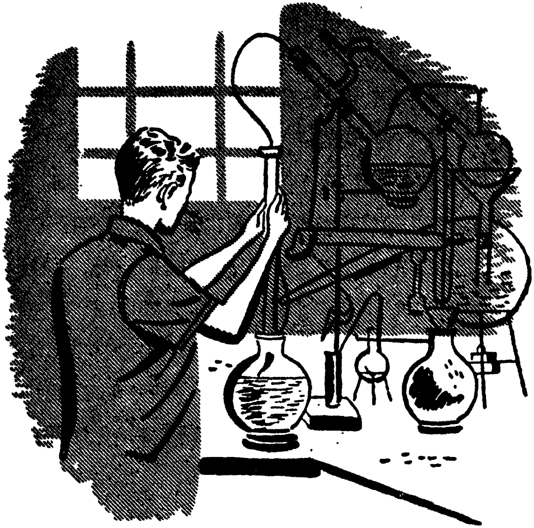
कालेजों और विश्वविद्यालयों में पढ़ाते भी हैं और शोध-कार्य भी करते हैं।

ज्यादा प्रशिक्षण पाये हुए रसायनज्ञ औद्योगिक कारखानों में काम करते हैं, जहां वे इस किताब में वर्णित कुछ पदार्थों को ज्यादा अच्छा बनाने की कोशिश में लगे रहते हैं। ऐसे रसायनज्ञों को **विकास रसायनज्ञ** या **रसायन इंजीनियर** कहा जा सकता है।

शोध रसायनज्ञों द्वारा सिद्धान्तों के प्रतिपादन और रसायन इंजीनियरों द्वारा वस्तुओं के उत्पादन के बाद भी रसायन शास्त्र जानने वाले दूसरे आदमियों की ज़रूरत रह जाती है। **बिक्री इंजीनियर** दूसरे कारखानों में जाकर वहां के अधिकारियों को बताते हैं कि नया पदार्थ किस तरह प्रयोग किया जायेगा। **वैज्ञानिक लेखक** रसायन शास्त्र से परिचित होते हैं और सूचना पुस्तिकाएँ, रिपोर्ट और नये पदार्थों का विवरण तैयार करते हैं। ये लोग भी या तो कालेजों में रसायन शास्त्र पढ़ चुके होते हैं या किसी रासायनिक कारखाने या प्रयोगशाला में काम करके इसका ज्ञान प्राप्त कर चुके होते हैं।

रासायनिक कामों में बड़े रसायनज्ञों की सहायता के लिए **प्रयोगशालीय सहायक** या **सहायक वैज्ञानिक** होते हैं। ये लोग हाई स्कूल पास करते ही इस क्षेत्र में आ जाते हैं। कुछ लोग इस काम के लिए विशेष प्रशिक्षण भी ग्रहण करते हैं।

स्त्री और पुरुष दोनों ही रसायन शास्त्र में अपना भविष्य उज्ज्वल बना सकते हैं। हर बीस में से एक रसायनज्ञ स्त्री होती है। कुछ रसायन सम्बन्धी नौकरियां तो ऐसी होती हैं जिनमें पुरुषों से ज्यादा संख्या में औरतें ही काम करती हैं। दफ्तर का काम जानने वाली लड़की को अगर रसायन शास्त्र का भी कुछ ज्ञान हो तो वह **रसायन सेक्रेटरी** बन सकती है। इसी तरह पुस्तकालयों का काम



शोध रसायनज्ञ अपना अधिकांश समय प्रयोगों पर खर्च करता है।

जानने वाली लड़की अगर रसायन शास्त्र की भाषा भी जानती है तो वह किसी विश्वविद्यालय या कारख़ाने में रसायन लाइब्रेरियन का काम कर सकती है।

आप कैसे कहते हैं कि आप रसायन शास्त्र के क्षेत्र में ठीक काम कर लेंगे? पहली बात तो यह जान लीजिये कि किसी भी वैज्ञानिक क्षेत्र में सफल होने के लिए किसी 'अद्वितीय मस्तिष्क' की ज़रूरत नहीं पड़ती। असली चीज़ तो उस विषय में दिलचस्पी होना ही है। तभी आपमें वैज्ञानिक की योग्यताएं पैदा हो सकेंगी। अगर आपको नये-नये आविष्कारों के बारे में पढ़ने में मज़ा आता है, अगर आप खुटर-पुटर करते रहना या छोटे-छोटे प्रयोग करना पसन्द करते हैं, और अगर वैज्ञानिक विषयों में आपकी दिलचस्पी है तो फिर आप

रसायन शास्त्र में अपना भविष्य बनाने की बात गम्भीरतापूर्वक सोच सकते हैं।

कुछ चीज़ें तो आप अभी ही शुरू कर सकते हैं। किताबें और पत्र-पत्रिकाएँ पढ़कर रसायनज्ञों और उनके कार्यों के बारे में जो कुछ जान सकते हैं अवश्य जानिये। अगर हो सके तो पास के रासायनिक कारखानों को देखने जाइये। अगर आपके कुछ दोस्तों को भी रसायन शास्त्र में दिलचस्पी हो तो एक **रसायन क्लब** बनाइये। कुछ किताबों में आसान से आसान चीज़ों से प्रयोग करने की तरकीबें लिखी रहती हैं। उनका फ़ायदा उठाइये और प्रयोग कीजिये।

और इतना सब कर चुकने के बाद अगर आप रसायन शास्त्र में अपना भविष्य बनाना चाहेंगे तो आपकी बुनियाद काफ़ी मज़बूत हो चुकी होगी।

